# तृतीय अध्याय

# हिंदी साहित्येतिहास के फुटकल कवियों का परिचय

किसी भाषा के साहित्य के इतिहास में जितना महत्त्व भाषा के साहित्य का, उसके निरूपण का, उसके सामाजिक, सांस्कृतिक आधार का होता है उतना ही महत्वपूर्ण साहित्य इतिहास के लिए इतिहास-बोध और इतिहास-दृष्टि का होता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थितियों के अनुसार होती हैं। इन्हीं को आधार बनाकर आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास-बोध के अनुसार किसी काल विशेष की प्रधान प्रवृत्तियों को आधार बनाकर इतिहास लेखन किया है। गणपतिचन्द्र गुप्त के इतिहास लेखन पर दिए गए विचार अत्यंत उपयोगी हैं जो आचार्य शुक्ल के इतिहास लेखन को समझने में काफी सहायक हैं। उनका विचार है कि, 'वस्तुतः परम्परा और युगीन वातावरण के अन्तर्विरोध से उत्पन्न द्वंद्व ही साहित्य के विभिन्न आंदोलनों, उसकी धाराओं और प्रवृत्तियों को गति देता हुआ साहित्य की विकास प्रकिया को संचालित करता है। अतः साहित्य इतिहास की विकासवादी व्याख्या के लिये उन सभी तथ्यों पर विचार करना आवश्यक है जो साहित्यकार के व्यक्तित्व एवं उससे संबंधित पूर्वपरम्परा , युगीन वातावरण, द्वंद्व के स्रोत, अभीष्ट लक्ष्य आदि पर प्रकाश डालते हैं।'

हिंदी साहित्य में 'फुटकल' शब्द का प्रयोग भले ही शुक्ल जी ने अपने इतिहास ग्रन्थ में किया हो किन्तु इतिहास लेखन की परम्परा को जब हम देखते हैं तो पाते हैं कि इनसे पूर्व ग्रियर्सन ने अपने ग्रन्थ में काल-विभाजन की योजना के अनुसार विभिन्न कालों से सम्बद्ध परिच्छेदों के अंत में 'परिशिष्ट' में उन कवियों को स्थान दिया जो उस कालखंड की मुख्यधारा से अलग थे। नलिन विलोचन शर्मा कहते हैं कि शुक्ल

जी ने ग्रियर्सन की योजना को आवश्यक व अधिक व्यवस्थित करके अपनाया है, "शुक्ल जी ने प्राय: सभी मुख्य कालों के अंत में 'फुटकल रचनाएँ', 'अन्य कवि' के अंतर्गत काल-विशेष की मुख्य प्रवृत्ति से भिन्न धाराओं के कवियों का विवरण दिया है।"[1]

आचार्य शुक्ल के फुटकल खाते को समझने के लिये सबसे पहले इस शब्द के अर्थ को जानना अत्यंत आवश्यक है। फुटकल का अभिप्राय शब्दकोश के अनुसार उनसे है जो अलग हों, अकेले हों या कई मेल के हों। अब शुक्ल जी के इतिहास लेखन को समझना होगा कि उन्होंने इसमें फुटकल खाता क्यों और किनके लिये बनाया। आचार्य शुक्ल ने साहित्यिक रचनाओं की प्रचूरता तथा प्रसिद्धि के आधार पर हिंदी साहित्य के इतिहास का काल विभाजन और नामकरण करने का प्रयास किया है। वीरगाथा काल के संदर्भ में उन्होंने वीरगाथात्मक रचनाओं के आधार पर इस युग को वीरगाथा काल कहना उचित समझा। इसी कारण उन्होंने अमीर खुसरो और विद्यापति को एक अलग खाता बना उसमें डाल दिया क्योंकि इन कवियों की काव्य-प्रवृत्ति उनके मापदंडो के अनुसार नहीं थी। इसी तरह भक्ति तथा रीतिकाल में भी उन्होंने उन सभी कवियों को फुटकल खाते में डाला जिनकी काव्य-प्रवृत्ति उस कालखंड की मुख्यधारा से अलग थी यहाँ उनका इस फुटकल खाते से किसी कवि को निम्न आंकना या कमत्तर समझना बिलकुल नहीं है क्योंकि जब फुटकल खाते को देखते हैं तो पाते हैं कि उन्होंने उन कवियों को अपने इतिहास में पर्याप्त स्थान दिया है। उनके इतिहास-ग्रन्थ के समस्त फुटकल कवियों का परिचय निम्नलिखित है -

### 3.1. आदिकालीन कवि-

#### 1. अमीर खुसरो :

आदिकालीन फुटकल कवियों में अमीर खुसरों का नाम प्रथम है। वे फारसी के सर्वश्रेष्ठ शायर, महान संगीतज्ञ तथा हिंदी और उर्दू के आदि कवि माने जाते हैं तथापि उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का

मूल्यांकन जितना अपेक्षित है उतना नहीं हो पाया। 'तूती-ए-हिंद' अमीर खुसरो का जीवन-काल 1253 ई. से 1325 ई. तक माना गया है। यह अवधि हिंदी साहित्येतिहासकारों के अनुसार वीरगाथा काल या संक्रमण युग है। राजनीतिक दृष्टि से यह भारतीय सम्राटों और सामंतों की पराजय तथा मुस्लिम शासकों की विजय का युग है।

खुसरों की भाषा शैली अत्यंत सरल और स्वाभाविक है। वास्तव में जनता के उद्गारों को साधारण ढ़ंग से प्रस्तुत करने का प्रयास उन्होंने अपने काव्य में किया है। उनके काव्य में हमें कहीं भी कृत्रिमता का भार तथा पाण्डित्य प्रदर्शन का ढ़ोंग नजर नहीं आता । भले ही लिखित या संग्रहीत काव्य के अभाव में अमीर खुसरो के काव्य की समीक्षा करना कठिन कार्य है, फिर भी परंपरा से प्राप्त, मौखिक रचना के आधार पर उनकी प्रतिभा की अद्वितीयता का पता लगाया जा सकता है। डॉ. जगन्नाथप्रसाद के मत में, "खड़ी बोली का सर्वप्रथम व्यावहारिक तथा व्यवस्थित प्रयोग हमको अमीर खुसरो की कविता में मिलता है।"[2] खुसरो की भाषा की सरलता और शैली की सुंदरता हम उनकी रचनाओं में देख सकते हैं-

एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरे पुत।

बिना परों वह उड़ गया, बांध गले में सूत।।

श्याम बरन और दांत अनेक, लचकत जैसे नारी।

दोनों हाथ से खुसरो खींचे और कहे तू आरी।।

मेरा मों से सिंगार करावत। आगे बैठ के मान बढावत।

बातें चिक्कन ना कोई दीसा। ए सखी साजन, ना सखी सीसा।

रोटी क्यों सूखी?

बस्ती क्यों उजड़ी ?

- खाई ना थी।

एक नार दो को ले बैठी। टेढी होके बिल में पैठी।।

जिसके बैठे उसे सुहाय। खुसरो उसके बल-बल जाए।।

अमीर खुसरो ने जिस काव्यशैली का आविष्कार किया, वह आगे भी चलती रही। परंतु बाजारू भाषा मानकर अधिकतर कवियों ने इसे अपनाया नहीं। उस समय काव्य-भाषा का ढ़ांचा ब्रजभाषा और अवधि से पूर्णतः प्रभावित था, "यहाँ इस बात की ओर ध्यान दिला देना आवश्यक प्रतीत होता है कि 'काव्य भाषा' का ढाँचा अधिकतर शोरसैनी या पुरानी ब्रजभाषा का ही बहुत पहले से चला आता था। अतः जिन पश्चिमी देशों की बोलचाल खड़ी होती थी, उनमें भी जनता के बीच प्रचलित पद्यों, तुकबंदियों आदि की भाषा ब्रजभाषा की ओर झुकी हुई रहती थी।"[3] खड़ी बोली का निखरा रूप हमें वृत्त कवियों के यहां भी देखने को मिलता है जिनमें कबीर के पदों में यह दृष्टिगत होता है-

"काहेरी नलनी तू कुमिलानी

तेरे ही नालि सरोवर पानी

जल में उतपति जल में बास

जल में नलनी तोर निबास।"[4]

## 2. विद्यापति :

विद्यापति का जन्म बिहार के दरभंगा जिले के विसपी नामक गाँव में हुआ था। साहित्येतिहासकारों द्वारा इनका जन्मकाल 1360 ई. के आस-पास माना जाता है। इनकी मृत्यु तिथि 1488 ई. मानी जाती है। विद्यापति को तिरहुत के राजदरबार में गौरवपूर्ण राजाश्रय प्राप्त था। इन्होंने संस्कृत भाषा में शैव सर्वस्वसार, गंगा वाक्यावली आदि ग्रंथों की रचना की। कीर्तिलता और कीर्तिपताका नाम से अवहट्ट भाषा में दो रचनाओं को प्रस्तुत किया। भावात्मक गीतिपरक 'पदावली' की रचना मैथिली हिंदी में की। इसी रचना के कारण विद्यापति 'मैथिलकोकिल' कहलाए। इनके प्रमुख संग्रह इस प्रकार हैं -

- पुरुष परीक्षा
- भूपरिक्रमा
- कीर्तिलता
- कीर्तिपताका
- गोरक्ष विजय
- मणिमंजरा नाटिका
- गंगावाक्यावली
- दानवाक्यावली
- वर्षकृत्य
- दुर्गाभक्तितंरगिणी
- शैव सर्वस्वसार

- गयापत्तामक
- विभागसार

श्रृंगार के साथ वीर रस का मिश्रण पश्चिम के काव्यों में है तो श्रृंगार के साथ भक्ति का मिश्रण हमें विद्यापति के पदों में मिलता है, "विद्यापति के पद अधिकतर श्रृंगार के ही हैं, जिनमें नायिका और नायक राधा कृष्ण हैं। इन पदों की रचना जयदेव के गीतकाव्य के अनुकरण पर ही शायद की गई हो। इनका माधुर्य अद्भुत है। विद्यापति शैव थे। उन्होंने इन पदों की रचना श्रृंगार काव्य की दृष्टि से की है, भक्त के रूप में नहीं।"[5] आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने इस मत से उन्हें श्रृंगार कवि घोषित कर देते हैं।

आदिकालीन कवि मनुष्य को ईश्वर के रूप में चित्रित करता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है, "ऐसा लगता है कि रासोकार ने पृथ्वीराज को भगवत्स्वरूप बताकर कहानी में थोड़ा धार्मिकता का रंग देना चाहा था। कीर्तिलता के कवि ने भी पाठक को कुछ पुण्यलाभ का प्रलोभन दिया था-'पुरूष कहानी हौं कहौं जसु पत्थावै पुन्नु'।"[6] आचार्य शुक्ल के अलावा ग्रियर्सन ने भी विद्यापति के जीवन तथा काव्य पर प्रकाश डाला है। ग्रियर्सन ने विद्यापति को धार्मिक प्रेम गीतों की रचना में पूर्ण प्रवीण माना है। उन्होंने गीत-परंपरा का प्रवर्तन करने वाला विद्यापति को बताया।

### 3.2. भक्तिकालीन फुटकल कवि :

1. **छीहल :**

छीहल भक्तिकाल के सगुणधारा के पहले फुटकल कवि हैं। "संवत् 1575 में इन्होंने 'पंचसहेली' नाम की एक छोटी-सी पुस्तक दोहों में राजस्थानी मिली भाषा में बनायी जो कविता की दृष्टि से अच्छी नहीं कही जा सकती। इसमें पांच सखियों की विरह वेदना का वर्णन है।"[7] इस पुस्तक में दोहे इस ढंग से हैं-

"देख्या नगर सुहावना, अधिक सुचंगा थानु।

नाऊ चंदेरी परगटा, जनुं सुरलोक समानु।।

पंद्रह सै पचहतरै, पूनिमा फागुण मास।

पंचसहेली वर्णई, कवि छीहल परगास।।"[8]

**2. लालचदास :**

लालचदास को ग्रियर्सन ने चतुर्थ अध्याय के परिशिष्ट में रखा है। उन्होंने इनका नाम लालनदास बताया है। ग्रियर्सन ने इसके जन्म को लेकर टिप्पणी दी है कि, "इस कवि ने हरिचरित्र नामक भागवत का भाषानुवाद 1585, 1587 या 1595 वि. में प्रस्तुत किया था। अतः 1595 ई. इनका जन्मकाल कदापि नहीं हो सकता। इस समय तक तो शायद कवि जीवित भी न रहा हो।"[9] इनकी दो पुस्तकों का उल्लेख मिलता है जिसमें सं. 1585 में 'हरिचरित' तथा सं. 1587 में भागवत दशम स्कंध भाषा' नामक पुस्तक हैं। शुक्ल जी के मतानुसार उनकी ये पुस्तकें सामान्य श्रेणी की हैं जो दोहे-चैपाइयों में लिखी गई हैं। उनकी चैपाइयाँ इस ढ़ंग की हैं-

"पंद्रह सौ सत्तासी जहिया। समय बिलंबित बसौं तहिया।।

मास असाढ़ कथा अनुसारी। हरिबासर रजनी उजियारी।।

सकल संत कहँ नावौं माथा। बलि-बलि जैहों जादवनाथा।।

रायबरेली बरनि अवासा। लालच रामनाथ कै आसा।।"[10]

**3. कृपाराम :**

इन्होंने 'हित तरंगिणी' नामक ग्रंथ सं. 1598 में दोहों में बनाया। रीति या लक्षण ग्रंथों में यह ग्रंथ बहुत पुराना है, "कवि ने कहा है कि और कवियों ने बड़े छंदों के विस्तार में श्रृंगार रस का वर्णन किया है पर मैंने सुधारता के विचार से दोहों में वर्णन किया है। इससे जान पड़ता है कि इनके पहले और लोगों ने भी रीतिग्रंथ लिखे थे जो अब नहीं मिलते हैं।"[11] कई विद्वानों ने इनके इस ग्रंथ को एक विचित्र काव्य बताया है। शिवसिंह सरोज में लिखा है, "कृपाराम की हिततरंगिणी का समय सं. 1598 माना जाता है पर यह 1798 की रचना है और इसके रचियता कृपाराम संभवतः जयपुर के उन ज्योतिषी कृपाराम से अभिन्न हैं जिन्होंने स. 1772 में 'समयबोध' की रचना की। पंजाब प्रांतीय हिंदी साहित्य का इतिहास (पृ. 265) में इन्हें पंजाबी कहा गया है।"[12] इनके काफी दोहे बिहारी के दोहों से मिलते-जुलते हैं,

"कातिक में कहत विदेस को चलन कंत

परिवांरू पंचमी भली न, घन छाई है

सातम अग्यारस' रू तेरस अमावस्या जो

गाजत सघन घन महा दुखदाई है

करत वियोग रोग, वारि बरसै न आगे,

ऐसे जोग जानि बात मोको न सुहाई है

एक मत कहे यामें मेद्य भलो प्राची दिसि

रहिये 'कृपाल' गेह नवौ निधि पाई है"[13]

**4. महापात्र नरहरि बंदीजन :**

इनका जन्म सं. 1562 तथा मृत्यु सं. 1667 में बतायी जाती है। शिवसिंह सरोज के अनुसार, "इनका कोई भी ग्रंथ उस समय तक देखने सुनने में नहीं आया था किंतु इनके सैकड़ों कवित्त अनेक ग्रंथों तथा संकलित पुस्तकों में देखने में मिले हैं।"[14] शुक्ल जी के अनुसार, "इनके बनाए दो ग्रंथ परंपरा से प्रसिद्ध हैं- 'रूक्मिणी मंगल' और 'छप्पय नीति'।"[15] इनके जन्म स्थान पर भी शिवसिंह सरोज में असनी निवासी तथा आचार्य शुक्ल के इतिहास ग्रंथ में अरूनी पर भेद है।

"नाम नरहरि है, प्रशंसा सब लोग करैं

हंसहू से उज्जवल सकल जग व्यापे हैं

गंगा के तीर ग्राम असनी गोपालपुर

मंदिर गोपाल जी को, करत मंत्र जापे हैं

कवि बादसाही, मौज पावै बादसाही, ओज-

गावै बादशाही, जाते अरि गन कांपे हैं

जब्बर गनीमन के तोरिबे को गब्बर है

हुमायूं के बब्बर अकबर के थापे हैं।"[16]

**5. नरोत्तमदास :**

इनका जन्म सीतापुर के बाड़ी जिले में हुआ। शिवसिंह सरोज में इनका जन्म "संवत् 1602"[17] के आस-पास बतलाया गया है। कवि का 'सुदामा चरित्र' ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है, "इसमें घर की दरिद्रता

का बहुत ही सुंदर वर्णन है। यदपि यह छोटा है, तथापि इसकी रचना बहुत ही सरस और हृदयग्राहिणी है और कवि की भावुकता का परिचय देती है।"[18] इनकी भाषा भी परिमार्जित और व्यवस्थित है। अनेक मतों के अनुसार इनका दूसरा खण्ड काव्य 'ध्रुव चरित' भी है लेकिन यह अभी तक देखने में नहीं आया है।

ग्रियर्सन के अनुसार, "इनका जन्म संवत् 1610 में हुआ"[19] था।

"सीस पगा न झगा तन में, प्रभु जानै को आहि बसै केहि ग्रामा

धोती फटी सी लटी दुपटी, यक पाय उपानह की नहिं सामा

द्वार खड़ो द्विज दुर्बल जानि, रह्यों चकि सो बसुधा अभिरामा

पूछत दीनदयाल को धाम, बतावत आपनो नाम सुदामा।"[20]

**6. आलम :**

"आलम पहले एक सनाढ्य बाह्मण थे किंतु बाद में इन्होंने धर्म परिवर्तन किया और मुस्लमान हो गए। ये अकबर कालीन हैं तथा उनकी खिदमत में बहुत दिनों तक रहे।"[21] इन्होंने 'माधवानल कामकंदला' की रचना संवत् 1640 में की जिसमें प्रेमकहानी दोहा-चौपाई में लिखी है। उनके इस ग्रंथ के बारे में शुक्ल जी का मत है, "यह श्रृंगार रस की दृष्टि से ही लिखी जान पड़ती है, आध्यात्मिक दृष्टि से नहीं। इसमें जो कुछ रूचिरता है वह कहानी की है, वस्तु वर्णन, भाव व्यंजना आदि की नहीं।"[22]

"आलम ऐसी प्रीति पर , सरबस दीजै वारि

गुपत प्रकट इक सी रहै, दीजै कपट पिटारि।"[23]

**7. महाराज टोडरमल :**

राजा टोडरमल बादशाह के दीवान आला थे। ये अरबी, फारसी, संस्कृत विद्या में महानिपुण थे। इन्होंने श्रीमद्भागवत को संस्कृत से फारसी में सुनाया तथा भाषा में नीति संबंधी बहुत कवित्त कहे हैं। इनका जन्म स. 1550 तथा मृत्यु स. 1646 में मानी जाती है। इन्होंने फारसी हिसाब-किताब को ईरान देश की तरह ही हिन्दुस्तान में भी जारी करवाया। इनकी लिखी अभी तक कोई पुस्तक तो नहीं मिलती लेकिन फुटकल कवित्त इधर-उधर मिल जाते हैं,

"गुन बिन कमान जैसे, गुरू बिन ज्ञान जैसे

मान बिन दान जैसे, जल बिन सर है

कंठ बिन गीत जैसे, हेत बिन प्रीति जैसे

बेस्या रस रीति जैसे, फल बिन तर है

तार बिन जंत्र जैसे,स्याने बिन मंत्र जैसे,

पुरूष बिन नारी जैसे, पुत्र बिन घर है

'टोडर' सुकबि जैसे मन में बिचारि देखो

धर्म बिन धन जैसे पंछी बिन पर है।"[24]

**8. महाराजा बीरबल :**

बीरबल को महेशदास, ब्रह्म कवि तथा कविराय आदि नामों से जाना जाता है। "इनका जन्म 1528 ई. के आस-पास माना जाता है।"[25] इनकी छोटी कविताएं, हाजिर जवाबी के चुटकले आज भी लोगों

की जुबान पर हैं। "कट्टर मुस्लमानों द्वारा ये बड़ी घृणा की दृष्टि से देखे जाते थे, क्योंकि उनका यह विश्वास था कि इन्हीं के प्रभाव के कारण अकबर इस्लाम से विरक्त हो गया था।"[26]

बीरबल की कोई भी कृति अभी तक हमें प्राप्त नहीं है। किसी अज्ञात लेखक का लिखा हुआ 'बीरबल नामा' नामक ग्रंथ किसी भी बाजार से खरीदा जा सकता है। वस्तुतः यह 'जो मिलर्स जेस्टबुक' का भारतीय प्रारूप है, "कुछ कहानियां तो सार्वदेशिक हैं।"[27]

"कहै कवि ब्रह्म वारि हेरत हरिन फिरै,

बैहर बहुत बड़े जोर सौं जहकि हैं"[28]

**9. गंग :**

गंग कवि हिंदी के अत्यंत प्रसिद्ध रचयिता हैं। उनका उपस्थिति काल 1595 ई. तथा मृत्यु 1674 और 1682 के बीच मानी गयी है। गंग कवि बहुत ही निर्भिक व निडरता से बात करते थे। उनके प्रसंशकों में बीरबल, रहीमखान खाना तथा मानसिंह सवाई आदि थे। इन्होंने वीर, श्रृंगार तथा हास्यरस का निपुणता से अपनी रचना में प्रयोग किया है। इनकी कोई पुस्तक अभी तक नहीं मिली है किंतु अनेक संग्रह-ग्रंथों में इनके कवित्त मिलते हैं।

ग्रियर्सन के इतिहास ग्रंथ में इनका "गंगा प्रसाद"[29] के नाम से जिक्र है।

"गंग गोछ, मोछा जमुन, गिरा अधर अनुराग।

खान खानखानान के कामद वदन-प्रयाग।।"[30]

**10.मनोहर कवि :**

मनोहर कवि (राजा मनोहरदास) कछवाहा के सरदार थे तथा महाराज अकबर के फारसी तथा संस्कृत भाषा के महान कवि थे। "इनका जन्म सं. 1645 तथा मृत्यु सं. 1677 के आस-पास मानी जाती है।"[31] कवि ने 'शत प्रश्नोत्तरी' नामक पुस्तक लिखी और नीति तथा श्रृंगार रस के बहुत से फुटकल दोहे कहे हैं-

"अचरज मोहिं हिंदू तूरूक, बादि करत संग्राम।

एक दिपति सों दिपत अति, काबा कासीधाम।।"[32]

**11.बलभद्र मिश्र :**

ये ओरछा के सनाढय ब्राह्मण तथा केशवदास के बड़े भाई थे। "इनका 'नखशिख' सारे कवि कोविदों में महाप्रामाणिक ग्रंथ है तथा भागवत पुरान पर टीका बहुत सुंदर किया है।"[33] आचार्य शुक्ल लिखते हैं, "सवंत 1891 में गोपाल कवि ने बलभद्र कृत नखशिखा की एक टीका लिखी जिसमें उन्होंने बलभद्र कृत तीन और ग्रंथों का उल्लेख किया है- बलभद्री व्याकरण, हनुमन्नाटक और गोवर्द्धनसतसई टीका। पुस्तकों की खोज में इनका 'दुषणविचार' नाम का एक और ग्रंथ मिला है।"[34] इन्होंने अपनी रचना में उपमा, उत्प्रेक्षा और संदेह आदि अलंकारों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है-

"मरकत सूत कैधौं, पन्नग के पूत अति,

राजत अभूत, तम राज के से तार हैं

मखतूल गुन ग्राम, सोभित सरस स्याम

काम मृग कानन के, कुहू के कुमार है

कोप की किरनि , कै जलज नल नील तंत,

उपमा अनंत चारू चंवर सिंगार हैं

कारे, सटकारे भीजै मीजै सोजे सों सुगंध बास

ऐसे 'वलभद्र' नव बाला तेरे बार हैं"[35]

**12.जमाल :**

जमाल कवि अकबर कालीन हैं तथा इनके रचनाकाल पर थोड़ा बहुत मतभेद हमें देखने को मिलता है। शिवसिंह सरोज के अनुसार इनका रचनाकाल 1602 ई. माना गया है तथा आचार्य शुक्ल ने सं. 1627 का अनुमान लगाया है। ये कवि गूढ़ कूट में बहुत निपुण थे। इनके दोहे काफी प्रसिद्ध हैं जो राजपूताना में आज भी लोकप्रिय हैं। इनका ग्रंथ तो अभी तक नहीं मिला किंतु फुटकल रचनाएं, कुछ पहेलियों तथा दोहों में मिलती हैं-

"वायस राहु भुंजग हर, लिखती बाल ततकाल

फिरि फिरि मेहत फिरि लिखत, कारन कौन जमाल

आजु अमावस सर्व घट, ससि भीतर नंदलाल

बीचहिं परिवा हव रहौ, कारन कौन जमाल

तृषावंत भइ कामिनी गई सरोवर पाल

सर सूखयो आंनद भयो, कारन कौन जमाल

सजि सोरह, बारह पहिरि चढी अय यक बाल

उतरी कोयल बोल सुनि, कारन कौन जमाल"[36]

**13.केशवदास :**

केशवदास बलभद्र मिश्र के भाई तथा काशीनाथ के पुत्र थे। "इनका जन्म सं. 1612 और मृत्यु 1674 के आसपास मानी जाती है।"[37] ये पहले भाषा कवि हैं जिसका (कविप्रिया, राग कल्पद्रुम) बाद के कवियों ने प्रायः अनुसरण किया है। "इनका प्रथम महत्वपूर्ण ग्रंथ 'विज्ञानगीता' है, जिसको इन्होंने मधूकर साह के नाम पर लिखा। तब इन्होंने प्रवीनराय पातुरी के लिए कवि-प्रिया लिखी।"[38]

इनके रचे सात ग्रंथों का उल्लेख निम्न है- कविप्रिया, रसिकप्रिया, रामचंद्रिका, वीरसिंहदेवचरित, विज्ञानगीता , रतनबावनी और जहांगीर जसचंद्रिका।

"सारांश यह कि प्रबंधकाव्य रचना के योग्य न तो केशव में अनुभूति ही थी, न शक्ति। परंपरा से चले आते हुए कुछ नियत विषयों के (जैसे- युद्ध, सेना की तैयारी, उपवन, राजदरबार के ठाठबाट तथा श्रृंगार और वीर रस) फुटकल वर्णन ही अलंकारों की भरमार के साथ वे करना जानते थे। इसी से बहुत से वर्णन योंहीं बिना अवसर का विचार किए, वे करते गए हैं। वे वर्णन वर्णन के लिए करते थे, न कि प्रसंग या अवसर की अपेक्षा से।"[39] "इसी तरह का एक वर्णन उनका बीरबल के साथ भी दिखाई देता है।"[40]

कवि-प्रिया

"शुरू करि माने इंद्रजित, जन मन कृपा विचार

ग्राम दये इकईस तब, ताके पाँय पखार

सविता जू कविता दई, ताकहं परम प्रकास

ताके कारन 'कविप्रिया', कीन्ही केशवदास"[41]

रसिक प्रिया

"संवत सोरह सै बरस, बीने अठतालीस

कातिक सुदि तिथि सत्मयी, बार बरन रजनीस

अति रति गति मति एक करि, विविध विवेक विलास,

रसिकन को 'रसिकप्रिया', कीन्हीं 'केसवदास'"[42]

रामचंद्रिका

"दीनदयाल कहावत 'केसव' , हौ अति दीन दसा गहि गाढो

रावन के अध ओध में राघव बुड़त हौं, बरही लई काढो

ज्यों गज की प्रहलाद की कीरति, ज्योंही विभीषन को जस  बाढो

आख बात पुकार सुनौ प्रभु, आरत हौं जो पुकारत ठाढो ।"[43]

विज्ञान-गीता

"सोरह सै बीते बरस, विमल सतसठा पाइ

भई ज्ञान गीता प्रकट, सबही को सुखदाइ ।"[44]

फुटकर

"पावक पच्छी पसू नग नाग, नदी नद लोक रच्यो दस-चारी

'केसव' देव अदेव रच्यो, नरदेव रच्यो, रचना न निवारी

रचिकै नरनाह बली बरबीर, भयो कृतकृत्य महाब्रतधारी

दै करतपन आपन ताहि, दियो करतार दोऊ कर तारी"[45]

**14. होलराम :**

ये अकबर के समय में राजा हरिवंश राय के आश्रित थे तथा इन्हीं के माध्यम से दरबार तक पहुंचे थे। अकबर के द्वारा दी गई जमीन पर होलपुर नामक गांव बसाया। एक दिन उसी गांव में अयोध्या से लौटते समय गोस्वामी तुलसीदास पहुंचे तथा कवि होलराम को एक लौटा दिया जिसकी प्रशंसा में कवि होलराम ने कहा-

"लोटा तुलसीदास को, लाख टका का मोल"[46]

गोस्वामी ने तुरंत जबाव दिया-

"मोल तोल कछु है नहीं , लेहु राय कवि होल"[47]

"कवि ने उस लोटे को मूर्ति समान स्थापित किया तथा उसपर चबूतरा बनाकर पूजा करते रहे तथा आज तक उसकी पूजा होती है।"[48] इनकी रचनाओं में जनता के प्रति कोई विशेष आकर्षण देखने को नहीं मिलता। जान पड़ता है कि इन्होंने केवल राजाओं तथा रईसों के गुणगान तक ही स्वयं को सीमित रखा-

"माथूर ते न तख्त हव है, बख्त ना मुगल कैसो,

हव है ना नगर कहूं आगरा नगर ते

गंग ते न गुनी, तानसेन ते न तानवंद

मान ते न राजा औ न दाता बीरबल ते

खान, खानखाना ते न, नर नरहरि हू ते

हवै है ना दीवान कोऊ टोडर टडर ते

नवौ खंड, सात दीप, सातहू समुद्र बीच

हवैहै ना जलालुदीन साह अकबर ते"[49]

**15. रहीम :**

इनका पूरा नाम अब्दुल रहीम खानेखाना था तथा इनका जन्म सं. 1610 और मृत्यु सं. 1683 में हुई। ये जितने अच्छे कवि थे उससे कहीं कुशल एक योद्धा तथा दानवीर थे। कवि अरबी, फारसी और तुर्की के साथ संस्कृत और ब्रजभाषा भी अच्छे से जानते थे। शिवसिंह लिखते हैं कि, "रहीम कवियों के बहुत बड़े आश्रयदाता ही नहीं थे, स्वयं भी संस्कृत में अत्यंत कठिन श्लोक लिखा करते थे।"[50] भाषा की प्रत्येक शैली में इन्होंने दोहे लिखे हैं किंतु नीति संबंधी दोहों से काफी प्रशंसा प्राप्त की। इनकी रहीम दोहावली या सतसई, बरवै नायिक-भेद, श्रृंगार, सोरठा, मदनाष्टक तथा रासपंचाध्यायी आदि रचनाएँ ही सुनी गई हैं।

रहीम एक अच्छे योद्धा थे जिन्होंने अनेक लड़ाईयाँ लड़ी तथा जीत प्राप्त की। इन्हें जागीर में अनेक सूबे तथा गढ़ मिले हुए थे किंतु एक लड़ाई में धोखा देने के अपराध में जहांगीर ने इनकी समस्त सम्पति जब्त

कर ली तथा कैद करवा दिए गए। कैद के बाद स्थिति काफी दिन दयनीय रही तथा यह मर्म उनके दोहों में अनेक जगह देखने को मिलता है-

"तबही लौं जीबो देबौ होय न धीम

जग में रहिबो कुंचित गति उचित न होय रहीम।"[51]

गोस्वामी तुलसीदास के साथ भी इनकी बातचीत का जिक्र है। एक ब्राह्मण को तुलसीदास ने दान के लिए रहीम के पास एक पंक्ति देकर भेजा-

"सुरतिय नरतिय नागतिय यह चाहत सब कोय।"[52]

रहीम ने बड़ी राशि देकर उस ब्राह्मण को भेजा तथा गोस्वामी की पंक्ति को पूरा करते हुए एक पंक्ति लिखकर दी-

"गोद लिए हुलसी फिरै तुलसी सो सुत होय।"[53]

**16. कादिर :**

"कादर"[54] का नाम कादिरबख्स पिलाही-जिला हरदोई के रहने वाले थे। इनका जन्म सं. 1635 के आस-पास माना जाता है। इनका उपस्थिति काल सं. 1660 के आस-पास समझा जा सकता है। साहित्य में इनकी किसी बड़ी पुस्तक का वर्णन तो नहीं हुआ है किंतु इनके फुटकल कवित्त आज भी लोगों के मुँह से सुने जाते हैं। इन्होंने कविता चलती भाषा में ही सही ढ़ंग से की है-

"गुन को न पूछै कोऊ, औगुन की बात पूंछै

कहा भयो दई, कलिजुग यों खरानो है

पोथी औ पुरान ज्ञान ठटठन में डारि देत,

चुगुल चबाइन को मान ठहरानो है

'कादर' कहत जासों कछु कहिवै की नाहिं

जगत की रीति देखि चुप मन मानो है"[55]

**17. मुबारक :**

सैयद मुबारक अली विलग्रामी का जन्म सं. 1640 में हुआ। ये संस्कृत, फारसी, अरबी और हिंदी के अच्छे कवि थे। इन्हें श्रृंगार का कवि समझा जाता है, "इन्होंने नायिका के अंगों का वर्णन बड़े विस्तार से किया है। कहा जाता है कि दस अंगों को लेकर इन्होंने एक-एक अंग पर सौ-सौ दोहे बनाए थे। इनका प्राप्त ग्रंथ 'अलकशतक' और 'तिलशतक' उन्हीं के अंतर्गत हैं।"[56] इनके कवित्त और सवैये लोगों के मुंह से आज भी सुने जाते हैं।

"कनक बरन बाल, नगन लसत भाल,

मोतिन की माल, उर सोहै भली भाँति है

चंदन चढाइ चारू चंद्रमुखी मोहिनी सी

प्राप्त ही अन्हाइ पगु धारे मुस्कात है

चूनरी विचित्र स्याम सजि के 'मुबारक' जू

ढ़ांकि कि नख-सिख ते निपट सकुचाति है

चन्द्र मै लपेटि कै, समेटि कै नखत, मानो

दिन को प्रनाम किए राति चली जाति है"[57]

**18. बनारसी दास :**

इनका जन्म सं. 1643 में हुआ तथा ये जौनपुर के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम खड़गसेन था तथा इन्होंने सं. 1698 तक अपना जीवनवृत 'अर्द्धकथानक' नामक ग्रंथ में दिया है। इसका महत्त्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि उस समय तक का पहला आत्मचरित ग्रंथ था। उन्होंने इस ग्रंथ में अपने आचरण तथा बीमारियों आदि का जिक्र किया है। पहले ये श्रृंगार रस की कविता किया करते थे किंतु बाद में इन्होंने ज्ञानोपदेशात्मक कविता करनी आरंभ कर दी। अब तक इनके द्वारा प्राप्त पुस्तकों का वर्णन इस प्रकार है-

"बनारसी बिलास (फुटकल कवियों का संग्रह), नाटक समयसार, नाममाला, अर्द्धकथानक, बनारसी पद्धति मोक्षपदी, ध्रुववंदना, कल्याणमंदिर भाषा, वेदनिर्णय पंचाशिका तथा मारगन विद्या।"[58]

"भोदू! ते हिरदय की आंखें।

जे सरबै अपनी सुख सम्पति भ्रम की सम्पति भाखैं

जिन आँखिन सों निरखि भेद गुन ज्ञानी ज्ञान विचारैं।

जिन आँखिन सों लखि सरूप मुनि ध्यान धारना धारै।"[59]

**19. सेनापति :**

सेनापति का जन्म संवत् 1646 के आस-पास माना जाता है। ये वृन्दावन में रहने वाले भक्त थे जिन्होंने क्षेत्र संन्यास ले लिया था। इन्होंने अपने कवित्त में बहुत ही सुंदर ऋतु वर्णन किया है। इनकी प्रशंसा शिवसिंह सरोज में इस तरह है कि, "इनकी प्रशंसा कहाँ तक की जाए। ये अपने समय के भामह थे।"[60] इनके ग्रंथ 'कवित्त रत्नागर' के बारे में ग्रियर्सन के ग्रंथ में सम्भावना लगाई गई है कि, "संभवतः 'कवित्त रत्नागर' का दूसरा नाम 'काव्यकल्पद्रुम' है जिसकी रचना स. 1706 में हुई थी।"[61] किंतु शुक्ल जी के अनुसार ये दो अलग-अलग ग्रंथ हैं, "इनका एक ग्रंथ 'काव्यकल्पद्रुम' भी प्रसिद्ध है।"[62]

सेनापति के भक्ति प्रेरित उद्गार भी बहुत अनूठे हैं, "'आपने करम करि हौं ही निबहौंगे तो ही करतार-करतार तुम काहे के?' वाला प्रसिद्ध कवित्त सेनापति का ही है।"[63]

"दूरि जदुराई, 'सेनापति' सुखदाई , ऋतु

पावस की आई, न पठाई प्रेम पतियां

धीर जलधर की सुनत धुनि धरकी छतियां

आई सुधि वर की,  हिए में आई खरकी,

सुमिरि प्राण प्यारी वह प्रीतम की बतियां

भूलिं औधि आवन की लाल मनभावन की,

डग भई बावन की , सावन की रतियां"[64]

**20. पुहकर कवि :**

पुहकर कवि जिसे शिवसिंह सरोज में पुष्कर कवि बताया है, का जन्मकाल तो स्पष्ट नहीं है किंतु ये प्रतापपुर के रहने वाले थे। इनको लेकर एक कहावत है कि जहांगीर ने इन्हें कैद कर लिया था तथा इन्होंने कैद में ही 'रसरतन' नामक ग्रंथ स. 1673 में लिखा जिससे प्रसन्न होकर राजा ने इन्हें रिहा कर दिया। "रसरतन एक प्रेमाख्यान है।"[65] यह ग्रंथ काफी महत्त्वपूर्ण भी है क्योंकि पहली बार साहित्य में कोई रचना प्रबंध-काव्य की साहित्यिक पद्धति पर रची गई है, "जायसी आदि सूफी शाखा के कवियों ने ही इसी प्रकार की पुस्तकें लिखी हैं, पर उनकी परिपाटी बिल्कुल भारतीय नहीं थी। इस दृष्टि से 'रसरतन' को हिंदी साहित्य में एक विशेष स्थान देना चाहिए।"[66]

"जल जोर महा घन घोर घटा, ब्रज ऊपर कोप पुरंदर को

कवि 'पुष्कर' गोकुल गोप सबै निरख मुख श्री मुरलीधर को

धर तैं धरिवो धरनी धर को , धरक्यो न हियो धरनीधर को

कर लै जनु कांकर को करको, करनाकर को? करूना कर को?[67]

**21. सुंदर :**

"सुंदर कवि ग्वालियर के ब्राह्मण थे तथा 1631 ई. के आस-पास उपस्थित थे।"[68] ये बादशाह शाहजहां के दरबार में थे। पहले इन्हें 'कविराय' तथा उसके पश्चात 'महाकविराय' की उपाधि मिली थी। कवि के बारे में ग्रियर्सन लिखते हैं कि, "इनका प्रमुख ग्रंथ साहित्य संबंधी है, जिसका नाम 'सुंदर श्रृंगार' है और जिसमें नायिका भेद है। यह सिंहासन बत्तीसी(राग कल्पद्रुम) के एक ब्रज भाषा अनुवाद के भी कर्ता हैं। यही लल्लु जी लाल के उक्त ग्रंथ के हिंदुस्तानी अनुवाद का मूल आधार है। इन्होंने ज्ञान-समुद्र नामक एक दार्शनिक ग्रंथ भी लिखा है। गार्सा-द-तासी(भाग-1 पृ. 282) के अनुसार वह

'सुंदरविद्या' नामक एक और ग्रंथ के भी रचयिता हो सकते हैं ।"[69] इसके अलावा 'सिंहासन बत्तीसी' और 'बारहमासा' नाम की दो पुस्तकें भी इनकी बतलाई जाती हैं,

"काके गए वसन, पलटि आए वसन

सु मेरो कछु बस न , रसन उर लागे हो

भौहैं तिरछौंहौं, कवि,'सुंदर' सुजान सोहैं

कछू अरसोहैं, गौहैं जाके रस पागे हो"[70]

**22. लालचंद या लक्षोदय :**

कवि ने स.1700 में 'पद्मिनीचरित्र' नामक एक प्रबंध काव्य लिखा जिसमें राजा रत्नसेन और रानी पद्मिनी की कथा का राजस्थानी मिली भाषा में वर्णन है । जायसी ने अपने ग्रंथ में कथा का जो रूप रखा है उससे इसकी कथा में बहुत जगह भेद है, "इस चरित्र की रचना गीतकाव्य के रूप में समझनी चाहिए।"[71]

"सिंहलद्वीप नो रजियो रे, सिंगल सिंह समान रे ।

तसु बहण छै पदमिनी रे, रूपे रंभ समान रे । ।

जोवन लहरयां जायछै रे, ते परषूँ भरतार रे ।

परतज्ञा जे पूरबै रे, तासु बरै, बरमाल रै । ।"[72]

## 3.3. रीतिकालीन फुटकल कवि :

इस खाते के अंतर्गत उन्होंने अलग-अलग प्रवृत्तियों के कवियों को रखा है। छ: वर्गों को आधार बनाकर कथात्मक नीतिपरक, ज्ञानोपदेश तथा भक्त कवियों की श्रेणी बना छयालीस कवियों का जीवनवृत्त तथा रचनावृत्त का उल्लेख किया है। इस खाते में उन कवियों का उल्लेख है जिन्होंने रीतिग्रंथ न लिखकर दूसरे प्रकार की पुस्तकें लिखी हैं। ये कवि प्रतिनिधि कवियों से केवल इसलिए भिन्न हैं क्योंकि इन्होंने क्रम से रसों, भावों, नायिकाओं, और अलंकारों के लक्षण कहकर उनके अंतर्गत अपने पद्यों को नहीं रखा। इनका क्रमवत् वर्णन इस प्रकार है-

### 1. बनवारी :

"ये 1634 के आस-पास उपस्थित थे। ये जोधपुर के राजकुमार अमर सिंह के दरबार में थे तथा उन्होंने अमर सिंह की वीरता की बड़ी प्रशंसा की है।"[73] कवि की श्रृंगाररस की कविता काफी प्रभावशाली होती थी,

"आनि कै सलाबति खां जोर कै जनाई बात

तोरि घर पंजर करेजे जाइ करकी

दिल्ली पति नाह को चलन चलिबे को भयो

गाज्यो गजासिंह को सुनी है बात बर की

कहै 'बनवारी' पातसाहि के तखत पास

फरकी फरकि लोथि लोचिन सों अरकी"[74]

**2. सबल सिंह चौहान :**

"इनका जन्म 1670 ई. में हुआ था।"[75] इनके निवास स्थान पर काफी मतभेद हैं क्योंकि कोई इन्हें चन्दागढ़ के राजा बतलाते हैं तो कोई सबलगढ के, शिवसिंह द्वारा उल्लेखित, "भाषा साहित्य के दो ग्रंथों 'षटऋतु' और 'भाषा ऋतुसंहार' के रचियता सबलसिंह कवि ही हैं।"[76] इन्होंने महाभारत के 24000 श्लोकों का पद्यबद्ध अनुवाद बहुत ही संक्षेप में किया है। इनकी भाषा ज्यादा काव्यात्मक न होकर बिल्कुल सीधी-सादी तथा समझ में आने वाली है,

"भावै चंद न चंदन सुरभि-समीर।

भावै सेज सुहावनि, बालम तीर।।

ऋतु कुसुमाकर आकर, बिरह बिसेखि।

ललित लतान मिता न, वितानन देखि।।"[77]

**3. वृंद :**

वृंद कवि मेड़ता जोधपुर के रहने वाले थे। इनका जन्म सरोज में, "स. 1700"[78] तथा शुक्ल जी के इतिहास में इनका उपस्थिति काल स. 1761 है। इन्होंने 'वृंदसतसई' की रचना स. 1761 में की जिसमें नीति के सात सौ दोहे हैं। शुक्ल जी के अनुसार, "'श्रृंगारशिक्षा' (स.1748) और 'भावपंचाशिका' नामक दो रस सम्बन्धी पुस्तकें और हैं।"[79] इनको शुक्ल जी ने सुक्तिकारों की श्रेणी में रखा है,

"कौरव-सभा संमुद्र, गहर विरोध-बारि

कोप-बड़वानल की ओप जगमगी है

जोधा दुरजोधन-तिमिंगलादि जल-जंत

'वृंद' कहै लोभ की लहरि अगमगी है

कुबुद्धि-बयार ते दुसासन-तुफान उठयो

चाल्यो बादियान चीर भीति रगमगी है

प्रीति-पतवार लैकै हूजिए करनधार

आजु हरि लाज की जहाज डगमगी है"[80]

**4. छत्रसिंह कायस्थ :**

ये बटेश्वर क्षेत्र के अटेर नामक गांव के श्रीवास्तव कायस्थ थे, "ये अमरावती के कल्याणसिंह के आश्रय में थे।"[81] इनकी 'विजयमुक्तावली' सं. 1757 में लिखी गई जिसमें महाभारत की कथा एक स्वतंत्र प्रबंधकाव्य के रूप में वर्णित है। इनकी कविता कहीं-कहीं ओजस्विनी दिखाई पड़ती है,

"निरखत ही अभिमन्यु को, बिदुर डुलायो सीस।

रच्छा बालक की करौं, ह्वै कृपाल जगदीस।।

कवच कुंडल इंद्र बाण कुंती ले गईं।

भई बैरिनि मेदिनी चित कर्ण के चिंता भई।।"[82]

**5. बैताल :**

बैताल कवि जाति के बंदीजन थे और राजा विक्रमासाही के दरबार में उपस्थित थे । यदि चरखारी नरेश विक्रमाजीत के शासन में ये उपस्थित थे तो चरखारी नरेश का शासन काल सं. 1839-86 के बीच ठहरता है। 'सरोज' के अनुसार उनका जन्म सं. 1734 बतलाया गया है जो अशुद्ध जान पड़ता है। इन्होंने नीति सामैय छप्पै बहुत ही सुंदर ढ़ंग से लिखे हैं। बैताल कवि के लौकिक व्यवहार संबंधी अनेक विषयों पर पद्य बड़े जोरदार हैं। इन्होंने सीधी-सादी बातों को ज्यों की त्यों अपने पद्यों में छंदबद्ध कर दिया है,

"मरै बैल गरियार मरै जो कट्टर टटू।

मरै कर्कसा नारि, मरै वह खसम निखटू।।"[83]

**6. आलम :**

आलम का जन्म 1700 ई. माना जाता है। पहले ये ब्राह्मण थे किंतु बाद में प्रेम के चक्कर के कारण मुस्लमान हो गए। "ये एक अरसे तक औरंगजेब के पुत्र शहजादा मुअज्जमसाह की खिदमत में रहे।"[84] आलम रीतिबद्ध रचना करने वाले नहीं अपितु प्रेमोन्मत कवि थे। 'प्रेम की पीर' और 'ईश्क का दर्द' इनके एक-एक वाक्य में भरा हुआ था। श्रृंगार रस की उन्मादमयी रचनाएं उनके काव्य में मिलती हैं, "प्रेम की तन्मयता की दृष्टि से आलम की गणना 'रसखान' और 'घनानंद' की कोटि में होनी चाहिए।"[85]

"दाने की न पानी की, न आवै सुध खाने की,

यां गली महबूब की आराम खुसखाना है।

रोज ही से है जो राजी यार की रजाय बीच,

नाज की नजर तेज तीर का निशाना है।

सूरत चिराग रोसनाई आसनाई बीच

बार-बार बरै बलि जैसे परवाना है।

दिल से दिलासा दीजै हाल के न ख्याल हूजै,

बेखुद फकीर, वह आशिक दिवाना है।।"[86]

**7. गुरू गोविंद सिंह जी :**

ये सिक्खों के दसवें गुरू थे जिनका जन्म सं. 1723 तथा मृत्यु सं. 1765 में हुई। इनके पिता गुरू तेग बहादुर की मृत्यु के पश्चात इन्होंने घोर तप किया तथा वरदान प्राप्त किया कि वे सदैव सत्कर्म में लगे रहें तथा जब भी शत्रु से लड़ें, विजय प्राप्त करें। इन्होंने न केवल अपनी बल्कि दूसरे कवियों की रचनाओं का भी एक संग्रह प्रस्तुत किया जो 'ग्रंथ साहिब' कहलाता है जिसके चार भाग हैं-

- "सुनीति प्रकाश-नीति
- सर्वलोह प्रकाश- नानक की रचनाओं की टीका
- प्रेम सुमार्ग- सिक्ख धर्म से संबंधित
- बुध सागर- भजन"[87]

गुरू गोविंद सिंह ब्रजभाषा, पंजाबी तथा फारसी के अच्छे ज्ञाता थे, "इनके प्रायः संपूर्ण ग्रंथों का संग्रह 'दशम ग्रंथ' कहलाता है।"[88]

"चक चिह्न अरू बरन जाति अरू पांति पाय जोहि।

रूप रंग अरू रेख भेष कोउ कहि न सकत तेहि।।

अचल मूर्ति अनुभव प्रकाश अमितो कहि सज्जै।

कोटि इंद्र इंद्राणि साहसाहन भनिज्जै।।"[89]

**8. श्रीधर या मुरलीधर :**

ये मूलतः प्रयाग के रहने वाले थे तथा इन्होंने कई पुस्तकें भी लिखीं तथा फुटकल कवित्त भी बनाए जिनका जिक्र हजारा में भी होता है, "इन्होंने संगीत की पुस्तक, नायिकाभेद, जैन मुनियों के चरित्र, कृष्णलीला के फुटकल, पद्य, चित्रकाव्य इत्यादि के अतिरिक्त इन्होंने 'जंगनामा' नामक ऐतिहासिक प्रबंध काव्य लिखा जिसमें फर्रूखसियर और जहाँदारशाह के युद्ध का वर्णन है।"[90] इनका कविताकाल सं. 1767 के आसपास माना जा सकता है।

"प्रफुलित भए सब अवधपुरी के वासी,

प्रफुलित सरजू की शोभा सरमाई है

नाचैं नर नारी अति आनंद अपार भरे

घुरत निसान 'मुर्लीधर' सुखदाई है।"[91]

**9. लाल कवि :**

ये राजा छत्रसाल के यहाँ उपस्थित थे। सरोज में लिखा है कि, "जब राजा छत्रसाल मारे गए उस समय ये कवि उस युद्ध में मौजूद था।"[92] किंतु आचार्य शुक्ल के अनुसार, "लाल कवि का परलोकवास

छत्रसाल से पहले ही हो गया था ।"[93] इन्होंने छत्रसाल बुंदेला का जीवन चरित्र 'छत्र प्रकाश' ग्रंथ में उतारा जो इतिहास दृष्टि से महत्त्वपूर्ण पुस्तक है । इस ग्रंथ की घटनाएँ बिल्कुल सच्ची हैं । यह ग्रंथ नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हो चुका है। कवि ने इस ग्रंथ में बुंदेल वंश की उत्पत्ति, चंपतराय के विजयवृत्तान्त, उनके उद्योग और पराक्रम, चंपतराय के अंतिम दिनों में उनके राज्य का उद्धार आदि बातों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। एक अन्य ग्रंथ 'विष्णु विलास' भी इन्हीं का स्वीकार किया जाता है।

"दारा और औरंग लड़े है दोऊ दिल्लीवाल,

एक भाजि गए, एकै मारे गए चाल में,

बाजी करि दगाबाजी , जीवन न राखत हैं,

जीवन बचाए ऐसे महा प्रलै-काल में,

हाथी ते उतरी हाड़ा लरयो हथियार लैके

कहै 'लाल' वीरता बिराजै छत्रसाल में"[94]

**10. घनानंद :**

"ये साक्षात रस मूर्ति और ब्रजभाषा काव्य के प्रधान स्तंभों में हैं । इनका जन्म संवत् 1746 के लगभग तथा मृत्यु स. 1796 में हुई ।"[95] लेकिन घनानंद की मृत्यु को लेकर किशोरी लाल गुप्त लिखते हैं कि, "ये नादिरशाही में नहीं मारे गए, बल्कि अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण में स. 1817 में मारे गए थे ।"[96] कहते हैं कि एक वेश्या सुजान के कारण इनके मन में विराग उत्पन्न हो गया था तथा ये वृंदावन चले गए थे। वृंदावन भूमि का प्रेम इनके कवित्त में कहीं-कहीं झलकता है।

घनानंद के सुजानसागर विरहलीला, कोकसागर, रसकेलिवल्ली और कृपाकंद आदि ग्रंथों के अलावा 500 के करीब फुटकल रचनाएँ मिलती हैं। प्रेमियों की मनोवृत्ति किस प्रकार की होती है तथा प्रेमदशा को इन्होंने बखूबी अपने कवित्त में उतारा है। विरक्त होने के पश्चात भी वे सुजान को नहीं भूला पाए तथा अपने काव्य में उसे हर बार संबोधित करते रहे, "यद्यपि इन्होंने संयोग और वियोग दोनों पक्षों को लिया है, पर वियोग की अंतर्दशाओं की ओर दृष्टि अधिक है। इसी से इनके वियोग संबंधी पद्य प्रसिद्ध हैं।"[97] इनके काव्य में बाहरी हलचल न के बराबर है जो कुछ हलचल है भीतर की है,

"कारी कूर कोकिला कहां को बैर काढति री,

कूकि-कूकि अबही करेजो किन कोरि रै।

पैड़ परै पापी ये कलापी निसि घौस ज्यों ही,

चातक रे घातक ह्वै तुहू कान फोरि लै।"[98]

**11. रसनिधि :**

"इनका नाम पृथ्वीसिंह था और ये दतिया के एक जमींदार थे। इनका उपस्थिति काल सं. 1717 के आस पास माना जाता है।..... इन्होंने बिहारी-सतसई के अनुकरण पर 'रतनहजारा' नामक दोहों का एक ग्रंथ बनाया।"[99] इसके अतिरिक्त उन्होंने और भी फुटकल दोहे बनाए जिसका संग्रह भी खोज में मिला। ये श्रृंगार रस के कवि माने जाते थे। उन्होंने जिस ढ़ंग की रचना की उसमें सफलता पाई,

"चतुर चतुरे तुव सबी लिखत न हिय ठहराय।

कलस छुवत कर आँगुरी कटी कटाछन जाय।।

मनगयंद छबि मद छके तोरि जंजीर भगात।

हिय के झीने तार सों सहजै ही बंधि जात।।"[100]

**12. महाराज विश्वनाथ सिंह :**

महाराज विश्वनाथ सिंह रीवां के बड़े ही विद्यारसिक तथा प्रसिद्ध कवि थे, "ये स. 1778 से 1797 तक रीवां की गद्दी पर रहे।"[101] लेकिन शिवसिंह सरोज में, "इनका जन्म स. 1843 में हुआ था। इन्होंने सं. 1892 से 1911 तक राज किया।"[102] बताया जाता है कि इनके शासन काल में सदैव कवि कोविदों का मान रहा। यद्यपि ये रामोपासक थे किंतु निर्गुण मत का भी बहुत आदर करते थे। इनकी कविता में उपदेशात्मक शैली देखी जा सकती है। इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की किंतु उनमें सर्वसंग्रह, कबीर के बीजक, विनय पत्रिका के तिलक और रामचंद्र की सवारी आदि बहुत ही सुंदर ग्रंथ हैं,

"बाजी गज सारे, रथ सुतर कतारे , जेते

प्यादे ऐंडवारे, जे सबीह सरदार के

कुंवर छबीले जे रसीले राजबंस वारे

सूर अनियारे अति प्यारे सरकार के

केते जातिवारे केते केते देसवारे जीव

स्वान सिंह आदि सैलवारे जे सिकार के"[103]

**13. भक्तवर नागरीदास जी :**

नागरीदास का वास्तविक नाम महाराज सांवत सिंह है तथा इनका जन्म सं. 1756 माना गया है। कहा जाता है कि ये इतने वीर थे कि इन्होंने तेरह वर्ष की आयु में बूंदी के हाड़ा जैत सिंह को मार दिया

था। पिता की मृत्यु के पश्चात उन्हें राज्याधिकारी घोषित कर दिया गया किंतु घरेलू संघर्षों के बाद उन्हें अपना राज्य प्राप्त हुआ। इस संघर्ष ने उन्हें विरक्त कर दिया तथा वे सब छोड़ वृंदावन चले गए और भक्ति में लीन हो गए। इनका कविताकाल सं. 1780 से 1819 तक माना जाता है। इनकी छोटी-बड़ी सब मिलाकर 73 पुस्तकों का पता चलता है। ये भक्त कवि थे, इनका साहित्य रचना की नवीनता से कोई प्रयोजन नहीं था, "इन्होंने गाने के पदों के अलावा कवित्त, रोला, अरिल्ल, सवैय आदि कई छदों का व्यवहार किया है।"[104] इनकी भाषा बिल्कुल सीधी तथा सरल है तथा उसमें चलतापन नहीं है,

"भादौं की कारी अँध्यारी निसा, लखि बादर मंद फुही बरसावै

स्यामा जी आपकी ऊँची अय पै, छकी रस रीति मनारहि गावै

ता समै 'नागर' के दृग दूरि ते, चातक स्वाति की मौज यो पावै

पौन मया करि घूंघट टारै, दया करि दामनी दीप दिखावै।"[105]

**14. जोधराज :**

जोधराज कवि ने नींवगढ़ (नीमराणा, अलवर) के राजा चंद्रभान चौहान के अनुरोध से 'हम्मीर-रासो' नामक एक बड़ा ग्रंथ स. 1875 में लिखा जिसमें रणथंभौर के प्रसिद्ध वीर महाराज हम्मीरदेव का चरित्र वीरगाथा काल की छप्पय पद्धति पर वर्णन किया गया है। काव्य में घटनाओं का वर्णन विस्तार के साथ तथा ठीक-ठीक हुआ है। प्राचीन वीरकाल के अंतिम राजपूत वीर का चरित जिस रूप में अंकित होना चाहिए था उसी प्रकार की भाषा में जोधराज अंकित करने में सफल हुए हैं, इसमें कोई सन्देश नहीं।"[106] इन्हें हिंदी काव्य-परम्परा की अच्छी समझ थी,

"कब हठ करै अलावदी रणथंभवर गढ आहि।

कबै सेख सरनै रहैं बहुर्यो महिमा साहि।।

सूर सोच मन में करौ, पदवी लहौ न फेरि।।

जो हठ छंडो राव तुम , उत न लाजै अजमेरि।।

राखि सेख न तजौ, तजौ सीस गढ देस।

रानी राव हमीर का यह दीन्हौं उपदेश।।"[107]

**15. बख्शी हंसराज :**

इनका जन्म स. 1799 में पन्ना में हुआ तथा ये पन्ना नरेश श्री अमान सिंह के दरबार में थे, "ये ब्रज की व्यासगद्दी के 'विजयसखी' नामक महात्मा के शिष्य थे जिन्होंने इनका सांप्रदायिक नाम 'प्रेमसखी' रखा। 'सखी भाव' के उपासक होने के कारण इन्होंने प्रेम माधुर्यपूर्ण रचनाएं लिखी।"[108] इनके चार ग्रंथों का पता चलता है जो 'सनेहसागर', 'विरहविलास', 'रामचंद्रिका', 'बारहमासा' हैं। इनमें 'सनेहसागर' अनूठा ग्रंथ है जिसमें भाषा सब प्रकार से आदर्श भाषा है,

"दमकति दिपति देह दामिनी सी चमकत चंचल नैना।

घूंघट बिच खेलत से उड़ि-उड़ि दीढि लगै ना।।

लटकति ललित पीठ पर चोटी बिच-बिच सुमन संवारी।

देख ताहि मैर सो आवत, मनहू भुंजगिरी कारी।"[109]

**16. जनकराज किशोरीशरण :**

ये अयोध्या से थे तथा सं. 1797 में उपस्थित थे। कवि ने भक्ति तथा ज्ञान संबंधित बहुत-सी कविताएँ की हैं। इनके द्वारा लिखित पुस्तकें हैं, "आंदोलन रहस्य दीपिका, तुलसीदासचरित्र, विवेकसार चंद्रिका, सिद्धांत चौंतीसी, बारहखड़ी, ललित श्रृंगार दीपक, कवितावली, जानकी शरणाभरण सीताराम सिंद्धातमुक्तावली, अनन्यतरंणिनी, रामरसतरंणिनी, आत्मसंबंध दर्पण, होलिकाविनोद दीपिका, वेदांतसार, श्रुतिदीपिका, रस दीपिका, दोहावली, रघुवर करूणाभरण आदि।"[110]

"फूले कुसुम द्रुम विविध रंग सुगंध के चहुं चाब।

गुंजत मधुप मधुमत नाना रंग रज अंग फाब।।

सीरो सुगंध सुमंद बात विनोद कंत बंहत।

प्रसत अनंग उदोत हिय अभिलाष कामिनी कंत।।"[111]

**17. अलबेली अलि :**

कवि अलि विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के महात्मा 'वंशीअलि' के शिष्य थे। अनुमान के द्वारा इनका कविताकाल विक्रम की 18वीं शताब्दी के अंतिम भाग में आता है। हिंदी के साथ संस्कृत में भी ये अच्छा लिखते थे, "इन्होंने 'समयप्रबंध पदावली' नामक ग्रंथ लिखा है जिसमें 313 भावभरे पद हैं।"[112]

"लाल तेरे लोभी लोलुप नैन।

केहि रस छकनि छके हौ छबीले मानत नाहिन चैन।।

नींद नैन धुरि-धुरि आवत अति, घोरि रही कछु नैन।।

अलबेली अलि रस के रसिया, कत बितरत ये बैन।।"[113]

**18. चाचाहित वृंदावन दास :**

ये पुष्कर के रहने वाले थे तथा इनका जन्म सं. 1765 माना जाता है। ये भी अपने शेष जीवन में वृंदावन चले गए तथा मृत्यु तक वहीं रहे। सं. 1800-1844 तक इनकी रचनाओं का पता चलता है। जैसे जनश्रुति है कि सूरदास ने सवा लाख पद बनाए थे वैसे ही इनकी भी एक लाख पद बनाने की जनश्रुति है जिनमें से बीस हजार तो लगभग मिल भी चुके हैं। इन्होंने नखशिख, अष्टयाम, समय प्रबंध आदि असंख्य प्रसंगों का वर्णन किया है,

"प्रीतम तुम मो दृगन बसत हो।

कहा बरोसे ह्वै पूछत हौं, कै चतुराई करिजु हंसत हौं।

लीजै परखि स्वरूप आपनो, पुतरिन में तुमहीं तो लसत हौ।

वृदांवन हीत रूप रसिक तुम, कुंज लड़ावत हिय हुलसत हौ।।"[114]

**19. गिरिधर कविराय :**

'सरोज' के अनुसार इनका उपस्थित काल स. 1770 के आसपास माना गया है, "इनकी व्यवहार तथा नीति संबंधी कुंडलियां बहुत प्रसिद्ध हैं। इस तरह की रचनाएँ सिर्फ दो ही कवियों ने की हैं जिसमें एक गिरिधर कविराय है तथा दूसरे दीनदयाल।"[115] उनके पद्य, दोहा, कुंडलियाँ, सोरण आदि लगभग पौने पांच सौ के करीब माने गए हैं जिनकी शैली अत्यंत सरल तथा प्रवाहपूर्ण है। इन्होंने नीति के गूढ़ विषयों के स्थान पर सामान्य जीवन की घटनाओं को लिया है तथा सामान्य उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। इसी कारण आज भी ये अनपढ़ लोगों के मस्तिष्क में जीवित हैं,

"जो तुझको तोला फुके, तू फूके सेर पच्चीस

मरोर करै इक तस्सु भर, तू कीजै हाथ बाईस

कीजै हाथ बाईस रीती व्यवहारिक ऐसी

जैसा-जैसा देव जगत में पूजा तैसी

कह गिरधर कविराय रोते के संग रोते जो

हँसते संग हंस मिले पुरुष हंस के बोले जो"[116]

**20. भगवत रसिक :**

भगवत रसिक का जन्म स. 1795 के आस-पास तथा रचनाकाल स. 1830-60 के बीच माना जाता है। ये स्वामी हरिदास के ठट्टी संप्रदाय के आठवें एवं अंतिम आचार्य ललित मोहिनीदेव के शिष्य थे। इन्हें भी प्रेमरस का कवि माना जाता है। ये सदैव कृष्णभक्ति में खोए रहते थे। इसीलिए इन्होंने कहा 'भगवत रसिक रसिक की बातें रसिक बिना कोऊ समुझी सकै ना।'

"हमारो वृन्दावन उर और

माया काल तहां नहिं व्यापै जहाँ रसिक सिरमौर

छुटी जाति सत असत वासना, मन की दौरदौर

भगवत रसिक बतायो श्रीगुरु अमल अलौकिक ठौर"[117]

**21. श्री हठी जी :**

कवि हठी जी का जन्म 1780 ई. के आसपास हुआ था। ये राधावल्लभ संप्रदाय के कृष्णभक्त कवि थे। ये भक्त कवि थे, लेकिन उनका लिखा एक ग्रंथ 'श्रीराधासुधाशतक' मिलता है जो रीति से प्रभावित है। इस रचना में 11 दोहे और 103 कवित्त सवैया हैं। जिस प्रकार इनके छंदों में विलास और सम्पन्नता का वर्णन है, उसी प्रकार इनकी कविता में उपमा और उत्प्रेक्षा जैसे अलंकार भरपूर मात्रा में मिलते हैं। भारतेंदु हरिशचंद्र को यह ग्रंथ (श्रीराधासुधाशतक) अत्यंत प्रिय था,

"कंचन फरस फैलो, मनिन मयूषै तैसे,

जरी को वितान, तेज तरनि परा परै,

पांवडे बिछौना बिछै , मोतिन के कोर बारे,

चारों ओर जोर ज्यों प्रभा भरा भरी परैं,

हीरन तखत बैठी , राधे महारानी 'हठी',

रंभा रति रूप गिरि धसकि धरा परै,

छूटी मुख चंद चारू किरनै कतारैं बांधि,

छावै छवै चंद्रमंडल पै छबि के छटा परै"[118]

**22. गुमान मिश्र :**

गुमान मिश्र के बारे में ग्रियर्सन लिखते हैं कि, "ये जिला हरदोई से थे तथा 1740 ई. के आस-पास उपस्थित थे। ये दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह के दरबार में थे। गुमान जी ने कलानिधि लिखा, जो श्री

हर्ष के नैषध का विविध छंदों में टीका है। 'कृष्णचंद्रिका' नामक ग्रंथ के रचयिता, दूसरे गुमान कवि भी संभवतः यही हैं।"[119] लेकिन आचार्य शुक्ल के अनुसार कृष्णचंद्रिका का निर्माणकाल सं. 1838 है। इनके अतिरिक्त रस, अलंकार और नायिकाभेद आदि ग्रंथ सुनने में आते हैं। भाषा पर इनका भी पूर्ण अधिकार रहा है। गुमान मिश्र उत्तम श्रेणी के कवि थे,

"झूकि रहो मुकुट रही है झूमि मोतीमाल,

चूमि रहे कान नैन लोक अनियारे री

कलित कपोल छवि , ह्वै रहे रदन चारू,

च्वै रही अधर अरूनाई अनियारे री

भनत् 'गुमान' नव बीना छहराह रही,

कंध फहराइ रहे छोर पट न्यारे री"[120]

**23. सरजूराम पंडित :**

इनका 'जैमिनीपुराण भाषा' ग्रंथ सं. 1805 में तैयार माना जाता है। यह ग्रंथ दोहों, चौपाइयों तथा अनेक छंदों में लिखा गया है जिसमें 36 अध्याय हैं। चौपाईयों का ढ़ंग बिल्कुल 'रामचरितमानस' जैसा प्रतीत होता है। इनके बारे में अधिक ज्ञात नहीं है किंतु इनका काव्य भी प्रभावशाली है,

"गुरूपद पंकज पावन रेनु। कहा कलपतरू का सुरधेनू।।

गुरूपद रज अज हरिहर धामा। त्रिभुवन बिभव , विस्व बिश्रामा।।"[121]

**24. भगवंत राम खीची :**

भगवंत राम खीची असोधर जिला फतेहपुर के राजा थे। उनके दरबार में कवियों का बड़ा आदर सत्कार था। शिवसिंह सरोज के अनुसार इन्होंने रामायण के सातों कांड की अद्भुत रचना कविताई के साथ की है। यह ग्रंथ तो मूल रूप से उपलब्ध नहीं है किंतु 'हनुमंतपच्चीसी' नामक रचना मिली है जिसमें इन्होंने 50 के करीब कवित्त हनुमान की प्रशंसा में कहे हैं। 'सरोज' में इनका रचनाकाल, "सं. 1780-92 है तथा सं. 1792 में इनका देहांत हुआ।"[122] किंतु आचार्य शुक्ल इनकी रचना 'हनुमतपच्चीसी' का निर्माण काल स. 1817 बतलाते हैं।

"सुबरन गिरि सो शरीर, प्रभा सोनित सी

तामै झलमलै रंग बाल दिवाकर को

दनुज-सघन-बन-दहन-कृसान महा

ओज सों बिराजमान, अवतार हर को

मनै 'भगवंत' पिंग लोचन ललित सोहैं,

कृपा कोर हेरयो बिरदैत उचै कर को

पवन को पूत, कपिकुल पुरूहूत सदा

समर सपूत, बंदौ दूत रघुबर को।"[123]

**25. सूदन :**

सूदन भरतपुर के राजा सुजान सिंह उपनाम सुरजमल के यहाँ उपस्थित थे। राजा की वीरता का वर्णन उन्होंने 'सुजानचरित्र' नामक प्रबंधात्मक वीर काव्य में किया है, युद्ध की घटनाएँ काल्पनिक न होकर इतिहास सम्मत हैं। सुजानचरित्र में सं.1802 से सं.1810 के बीच की घटनाएँ हैं जिससे पता लगता है कि राजा सुजान सिंह सं. 1810 तक जीवित थे। इस ग्रंथ को ग्रंथकार ने सात अंगों में बांटा है। सूदन की शब्दावली युद्ध का वातावरण उत्पन्न करने में सफल सिद्ध हुई है। इसी ग्रंथ के आरम्भ में उन्होंने छ: कवित्त में 175 कवियों की सूची देकर उन्हें प्रणाम किया है,

"सेलन धकेला ते , पठान मुख मैला होत,

केते भट-मेला है भजाए भ्रुव भंग में

तंग के कसे वे तुरकानी सब तंग कीन्हीं,

ढंग कीन्ही दिली औ दुहाई देत बंग में

'सूदन' सराहत सुजान कि रवान गहि

धायो धीर धारी बरिताई की उमंग में।"[124]

**26. हरनारायण :**

इन्होंने 'माधवनल कामकंदला' और 'बैताल पच्चीसी' नामक दो कथात्मक ग्रन्थों का निर्माण किया। "'माधवानल कामकंदला' का रचनाकाल सं.1812 माना गया है। इनकी कविता अनुप्रास आदि से अलंकृत हैं।"[125]

"सौहै मुंड चंद सों, त्रिपुंड सों विराजै भाल,

तुंड राजै रदन उदंड के मिलन तें।

पाप-रूप-पानिप विधन-जल जीवन के

कुंड सोखि सुजान बचाव अखिलन तें।"[126]

**27. ब्रजवासी दास :**

"ये वृंदावन दोआब के रहने वाले थे तथा 1770 ई. में उपस्थित थे।"[127] इन्होंने 'ब्रजविलास' नामक ग्रंथ 1770 ई. में लिखा जिसमें कृष्ण का वृंदावन-कालीन जीवन का चित्रण किया है। इसके अलावा 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाटक का भाषानुवाद करने वाले ब्रजवासीदास भी संभवतः यही हैं। इन्होंने सूर तथा तुलसी का भी अनुकरण किया है। इन्हें भी भक्तिरस का ही कवि माना है जिनकी भाषा सीधी-सादी तथा सुव्यवस्थित है,

"अंत तो मलीन, दीन हीन पुरूषारथ सों,

कर्मना बिहीन, पीन पाप की कहा कहौं

विषय अधीन और कहां लौ कहैं प्रबीन,

काम क्रोध लोभ मोह मद के धका सहौं

रावरे हैं समरत्थ मों से खल तारिबे को,

अधम उधारन हौ और ते न जाचहौं

सरल सुजान संत प्यारे की निछावरि मोहिं

दीजै सरनागति संत-गंग मो परो रहौं"[128]

**28. गोकुलनाथ, गोपीनाथ और मणिदेव :**

गोकुलनाथ 1820 ई. के आस-पास उपस्थित थे। इनकी 'चेतचंद्रिका' कवियों में प्रमाण मानी जाती है जिसमें इन्होंने बनारस के राजा चेतसिंह के कौटुम्बिक इतिहास का वर्णन किया है। "'महाभारत' का भाषानुवाद बनारस के राजा उदित नारायण के कहने पर हुआ। इन्होंने अपने पुत्र गोपी नाथ तथा उनके शिष्य मणिदेव के साथ मिलकर काफी काम किया। इस अनुवाद का नाम 'महाभारत दर्पण' है और इसके उपसंहार का 'हरिवंश दर्पण' जो 1829 ई. में कलकत्ता से छापा।"[129] इस ग्रंथ के बारे में शुक्ल जी ने कहा है, "कथाप्रबंध का इतना बड़ा काव्य हिंदी साहित्य में दूसरा नहीं बना। यह लगभग दो हजार पृष्ठों में समाप्त हुआ है। इतना बड़ा ग्रंथ होने पर भी न तो इसमें कहीं शिथिलता आयी है और न ही रोचकता और काव्यगुण में कमी हुई है।"[130] गोकुलनाथ के इसके अलावा चेतचंद्रिका, गोविंद-सुखविहार, राधाकृष्ण विलास, राधानखशिख, नामरत्नमाला, सीताराम गुणार्णव, अमरकोष भाषा, तथा कविमुखमंडल आदि ग्रंथ देखने में आए हैं,

"सखिन के श्रुति में उकुति कल कोकिल की

गुरूजन हू पै पुनि लाज के कथान की"[131] (गोकुलनाथ)

**29. बोधा :**

बोधा पन्ना नरेश खेत सिंह (सं. 1809-15) के यहाँ थे। "शिवसिंह सरोज में इनका जन्मकाल स. 1804 बताया गया है किंतु किशोरीलाल गुप्त ने, "अतः सं.1804 इनका उपस्थित काल है, न की जन्मकाल।"[132] कहा है। "इनकी 'विरहवारीश' और 'इश्कनामा' नामक दो कृतियाँ उपलब्ध हैं जिनमें पहली तो माधवानल-कामकंदला की प्रसिद्ध प्रेमकहानी पर प्रबंधकाव्य है तथा दूसरी प्रेम पर लिखे मुक्तकों का संग्रह है।"[133] इन्होंने 'विरहवारीश' अपने वियोग के छ: महीनों में तैयार की। इन्होंने कभी

भी किसी रस में बंधकर कविता नहीं की अपितु स्वतंत्र रूप से फुटकल कवित्तों की रचना की । इसके बावजूद भी इन्हें भावुक व रसज्ञ कवि के रूप में पहचान मिली,

"एक लिये चौरी कर छत्र लिये एकै हाथ,

एकै छाँहगीर , एकै दावन सकेलती

एकै लिये पानदान , पीकदान सीसा सीसी,

'बोधा' कवि कोऊ बीन बांसुरी सितार लिए

लाडिली लडावैं फूल गेंदन के झेलती

छोटे ब्रजराज, छोटी रावटी रंगीन, तामें-

छोटी-छोटी छोहरी अहीरन की खेलती ।"[134]

**30. रामचंद्र :**

इनका परिचय अभी तक ज्ञात नहीं है किंतु अनुमान लगाया जाता है कि मनियार सिंह के एक ग्रन्थ 'भाषा महिम्न' नामक ग्रंथ स.1841 में इनका जिक्र हुआ है, "जिससे इनका उपस्थिति काल स. 1841 माना जा सकता है ।"[135] इनकी एक पुस्तक 'चरणचंद्रिका' प्रकाश में आयी थी । यह भक्ति रस पर आधारित ग्रंथ है जिसमें पार्वती जी का वर्णन बहुत ही मधुर व अनूठे ढ़ंग से किया है,

"नूपुर बजत मानि मृग से अधीन होत,

मीन होत जानि चरणामृत झरनि को ।

खंजन से नचै देखि सुषमा सरद की-सी

संचै मधुकर से पराग केसरनि को।"[136]

**31. मंचित :**

ये बुंदेलखंड के रहने वाले थे। इनके उपस्थितिकाल में भेद है जो ग्रियर्सन के अनुसार "सं. 1785"[137] है तथा आचार्य शुक्ल "सं.1836"[138] मानते हैं। इनकी कृष्ण रचित 'सुरभी-दानलीला' तथा 'कृष्णायन' नामक दो पुस्तकें हैं जिसमें श्री कृष्ण का नखशिख वर्णन है। 'कृष्णायन' तुलसीदास की रामचरित मानस का अनुकरण कर लिखी है,

"आजु निज पानिन ते पान छुई पाऊं जो हौं

बेंतन ते मारि गोप ग्वाल बिचलाऊं ना।

बीरन की सौंह जो अहीरन के देखत ही

बीरबल बीरहू को बीर गहि लाऊं ना।"[139]

**32. मधुसूदनदास :**

"मधुसूदनदास इष्टकापुरी के माथुर ब्राह्मण थे जिनका उपस्थिति काल 1782 ई. था।"[140] शुक्ल जी के अनुसार किसी गोविंद दास के अनुरोध से इन्होंने सं. 1839 में 'रामाश्वमेघ' नामक बड़ा प्रबंधकाव्य बनाया। इस ग्रंथ की रचना 'मानस' की शैली में हुई है। गोस्वामी की प्रणाली का अनुसरण इन्होंने पूरी सफलता के साथ किया है। इनकी प्रबंध कुशलता, कवित्व शक्ति और भाषा शिष्टता तीनों उच्चकोटि की हैं,

"हे रघुकुल-भूषण, दुष्ट-विदूषण, सीतापति, भगवान हरे

नव पंकज लोचन, भव-भय-मोचन, अति उदार, गुन दिव्य भरे

यह नृप बल भारी, समर मंझारी, प्रन करि बंधन कीन प्रभों

अब बेगी घुड़ावतु, बिरद बढावहु, सबको दीन बिलोकि विभो।"[141]

**33. मनियार सिंह :**

ये काशी के रहने वाले थे तथा इन्होंने देवपक्ष में अच्छी कविता की है । इनकी भाषा अलंकारिय, शिष्ट तथा परिमार्जित है । इनके निम्नलिखित ग्रंथों का पता चला है- भाषा महिम्न, सौंदर्यलहरी, हनुमत छब्बीसी एवं सुंदरकांड।

"हनुमत छब्बीसी-

अभय कठोर बानी सुनि लछिमन जू की

मारिबे को चाहि जो सुधारि खल तलवारि

'यार' हनुमंत तेहि गरजि हहास करि

डपटि, पकरि ग्रीव, भूमि लै परे पछारि।

भाषा सौदंर्य लहरी-

तेरे पद पंकज पराग राजै राजेस्वरी

वेद वंदनीय विरूदावली बढ़ी रहै

जकी किनुकाई पाइ धाता ने धरित्री कियो

जापै लोक लोचन की रचना कढी रहै

'मनियार' जाहि बिस्णु सेबैं, सर्व पोषत,सो

सेस ह्वै के सदा सीस-सहस मढ़ी रहै।"[142]

**34. कृष्णदास :**

ये मिर्जापुर के रहने वाले कृष्णभक्त कवि थे। इन्होंने स. 1853 में 'माधुर्यलहरी' नामक एक पुस्तक 420 पृष्ठों में बनाई। इस पूरी पुस्तक में श्री कृष्णचरित का वर्णन है,

"कंचन मनि मरकत रस ओपी

नंदसुवन के संगम सुख वर, अधिक विराजति गोपी

करत विधाता गिरिधर पिय हित, सुरत धुजा सुख रोयी

वंदन कांति कै सुनि री भामिनी, सघनचंद श्री लोपी

प्राननाथ के चित चोरन को, भौहं भूंजगिनी कोपी

'कृष्णदास' स्वामी बस कीने प्रेम पुंज की चोपी।"[143]

**35. गणेश :**

गणेश कवि नरहरि बंदीजन के वंश में लाल कवि के पौत्र थे। इसका उपस्थिति काल सं. 1850 से 1910 होना पाया जाता है। ये महाराजा ईश्वरीय प्रसाद नारायण के दरबार में थे। ये 'रसोदय' के ठाकुर प्रसाद के मित्र भी थे। इनके तीन ग्रंथ प्रकाश में आए हैं- वाल्मीकि रामायण श्लोकार्थ प्रकाश, प्रद्युम्न विजय नाटक और हनुमत पचीसी।

"ताही के उपरांत , कृष्ण इंद्र आवत भए।

भेंटि परस्पर कांत, बैठ सभासद मध्य तहं।।

बोले हरि इंद्र सों बिनै कै कर जोटि दोऊ

आजु दिग्विजय हमारे हाथ आयो है।"[144]

**36. सम्मन :**

ये मल्लावां जिला हरदोई के ब्राह्मण थे। इनका जन्म सं. 1834 माना गया है। ये नीति सम्बन्धी प्रसिद्ध दोहों के रचयिता हैं जो आज भी आमजन के मुख तक प्रसिद्ध हैं। इनके काव्य में मार्मिकता छलकती है। इन्होंने सं.1879 में 'पिंगल काव्यभूषण' नामक रीतिग्रंथ भी बनाया। इनका रचनाकाल स. 1860 से 1880 तक माना जा सकता है,

"बाक, नीरज, बीरा, बनिज, दयूत कला, कल, पोत

'सम्मन' इन सातहुन पै, चोट करे रंग होत।

विप्र, वैध, बालक,बधू, गुरू, गरीब अरू गाय

'सम्मन' इन सातहुन पै, चोट करे रंग जाय।"[145]

**37. ठाकुर :**

ठाकुर नाम से तीन कवि हुए हैं जिसमें दो असनी तथा एक बुंदेलखंड के कायस्थ थे। इन तीनों का काव्य मिला-जुला है जिसका भेद करना बहुत ही कठिन है।

असन वाले ठाकुर-

ये रीतिकाल के आरंभ में उपस्थित थे। इनकी कोई रचना तो अभी तक सामने नहीं आई है किंतु फुटकल कवित्त यहाँ-वहाँ मिल ही जाते हैं,

"सजि सूहे दुकूलन बिज्जुछटा-सी अटान चढी घटा जोवति है

सुचिति ह्वै सुनै धुनि मोरन की, रसमाती संयोग संजावति है।"[146]

असनी वाले दूसरे ठाकुर-

इन्होंने सं.1861 में 'सतसई वरनार्थ' नाम से 'बिहारी सतसई' की एक टीका बनायी। इनका रचनाकाल स. 1860 के आस-पास माना जाता है। इनके पदों में भाव या दृश्य का निर्वाह अबोध रूप में पाया जाता है,

"कारे लाज करहे पलासन के पुंज तिन्हैं

अपने झकोरन झुलावन लगी है री।

ताही को ससेटी तृन-पत्रन लपेटी धरा-

धाम तैं अकास धूरि धावन लगी है री।"[147]

तीसरे ठाकुर बुंदेलखंडी-

ये जाति से कायस्थ थे और इनका पूरा नाम लाला ठाकुरदास था। इनका एक प्रसंग पद्माकर के साथ प्रसिद्ध है कि एक बार पद्माकर ने कहा ,'ठाकुर कविता तो अच्छी करते हैं पर पद कुछ हलके पड़ते हैं।' इस पर ठाकुर बोले, 'तभी तो हमारी कविता उड़ी-उड़ी फिरती है।'

"सीखि लीन्हों मीन मृग खंजन कमल नैन,

सीखि लीन्हों जस औ प्रताप को कहनो हैं।

सीखि लीन्हों कल्पवृक्ष कामधेनू चिंतामनि

सीखि लीन्हों मेरू औ कुबेर गिरि आनो है"[148]

**38. ललकदास :**

इनका उपस्थिति काल स. 1860 से स. 1880 के बीच होना पाया जाता है । इन्होंने 'सत्योपाख्यान' नाम से एक बड़ा वर्णनात्मक ग्रंथ का निर्माण किया, जिसमें उन्होंने भगवान राम के जन्म से विवाह तक की कथा बड़े ही विस्तार से वर्णित की है। यह ग्रंथ दोहों और चौपाइयों में सादगी के साथ लिखा गया है। ग्रंथ में इन्होंने हिंदी तथा संस्कृत दोनों कवियों के भाव इकट्ठे किए हैं,

"धरि निज अंक राम को माता । लह्यो मोद लखि मुख मृदुभाता।।

दंत कुंद मुकुता सम सोहै। बंधुजीव सम जीभ बिमोहै।।

किसलय सधर अधर छबि छाजै। इंद्रनील सम गंड बिराजै।।

सुंदर चिबुक नासिका सोहै। कुंकुम तिलक चिलक मन मोहै।"[149]

**39. खुमान :**

"बुंदेलखंड में आज तक यह बात फैली है कि खुमान जन्म से अंधे थे।"[150] ये बंदीजन और बुंदेलखंड के महाराज विक्रसाहि के दरबार में थे। इनके निम्नलिखित ग्रंथों का पता चलता है- अमर

प्रकाश, अष्टयाम, लक्ष्मणशतक, हनुमान नखशिख, हनुमान पंचक, हनुमान पचीसी, नीतिविधान, समरसार, नृसिंह चरित्र तथा नृसिंह पचीसी आदि।

"हनुमंत की रपेट, दै लंगूर की झपेट

दल दुष्ट को दपेट चरपेट चपलान

बजै नख चटाचट्ट, दंत होत खटाखट्ट,

गिरै स्त्रोन घटाघट्ट, फुटि-फुटि पार जान

कपि कुह किलकार, खल जूह झिलकार

परी पेट पिलाकर, कटैं राकस निदान"[151]

**40. नकलसिंह कायस्थ :**

ये झांसी के रहने वाले थे तथा राजा हिंदूपति की सेवा में थे। इनके बहुत से ग्रंथ भिन्न-भिन्न विषयों पर भिन्न-भिन्न शैलियों के हैं। इन्होंने भक्ति तथा ज्ञानपरक दोहे ज्यादा लिखे हैं। इनके ग्रंथ हैं- रासपंचाध्यायी, रामचंद्र विलास, शंकामोचन, रसिकरंजनी, विज्ञानभास्कर, ब्रजदीपिका, भारतकवितावली, भाषा सप्तशती, कवि-जीवन, आल्हा रामायण, रुक्मिणी मंगल, मूलढ़ोला, रहस लावनी, अध्यात्मरामायण, रूपक रामायण, नारी प्रकरण, सीतास्वयंवर, रामविवाह खंड, भारत वार्तिक, रामायण सुमिरनी पूर्व श्रृंगारखंड, मिथिलाखंड तथा जन्मखंड आदि।

"सगुन सरूप सदा सुषमा निधान मंजु,

बुद्धि गुन गुनन अगाध बनपति से।

भनै नवलेस फैल्यों बिशद मही में यस,

बरनि न पावै पार झार फनपति से।"[152]

**41. रामसहाय दास :**

रामसहाय जाति के कायस्थ और चौबेपुर (बनारस) के रहने वाले थे। रचनाओं में इनका नाम 'राम' था तथा इन्होंने बिहारी की 'सतसई' की भांति 'रामसतसई' बनायी जो शब्दों की कारीगरी तथा वाक्चातुर्य की दृष्टि से प्रसिद्ध है, इनका रचनाकाल 1703 से 1823 ई. के मध्य माना जाता है। 'रामसतसई' के अतिरिक्त उनकी तीन पुस्तक और प्रसिद्ध हैं- वाणीभूषण, वृत्ततरंगिनी और ककहरा।

"घाघरो घूम घुमेरो लसै, तन चूनरी रंग कुसुम्भ के गाढे

दूलरी तीलरी चौलरी कंठ, उरोजन कंचुकी मोल से बाढे

'रामसहाय' बिलोकत ही, घनश्याम निकुंज के बीच में ठाढे

लाज भरी अंखियां बिहंसी मिलि, चौबिस मास को घूंघुट काढे"[153]

**42. चंद्रशेखर :**

इनका जन्म स. 1855 में फतेहपुर में हुआ था। ये अपने जीवन में कुछ समय दरभंगा तथा उसके बाद जोधपुर नरेश महाराज मानसिंह के यहाँ रहे। जीवन के अंतिम दिनों में ये पटियाला के नरेश महाराज कर्मसिंह के दरबार में रहे। इनके प्रसिद्ध ग्रंथों में हम्मीरहठ, विवेकविलास, रसिकविनोद, हरिभक्ति विलास, नख-शिख, वृन्दावनशतक, गुह्पंचाशिका, ताजक ज्योतिष, माधवी वसंत आदि हैं। इन्होंने

श्रृंगार तथा वीररस वर्णन की श्रेष्ठ प्रणाली का अनुसरण किया है। यद्यपि उनका 'हम्मीरहठ' ग्रन्थ काफी प्रसिद्ध है, "चंद्रशेखर का साहित्यिक भाषा पर बड़ा भारी अधिकार था। अनुप्रास की योजना प्रचुर होने पर भी भद्दी कहीं नहीं हुई, सर्वत्र रस में सहायक ही है। युद्ध, मृगया आदि के संवाद सब बड़ी मर्मज्ञता से रखे गए हैं....तात्पर्य यह है कि 'हम्मीरहठ' हिंदी साहित्य का एक रत्न है।"[154]

"आलम नेवाज सिरताज पातसाहन के

गाज टे दराज कोब नजर तिहारी है

जाके डर डिगत अडोल गढ़धारी डग

मगत पहार ओ डुलति महि सारी है ।"[155]

**43. बाबा दीनदयाल गिरि :**

ये मथुरा जिले के बरवासा गाँव से थे। इनका जन्म स. 1859 में काशी के गायघाट मोहल्ले में हुआ था। लौकिक विषयों पर इनकी अन्योक्तियाँ नीति- साहित्य में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करती हैं। इनका ग्रन्थ 'अन्योक्तिकल्पद्रुम' अपनी भाषा के बल पर अनमोल है। इस ग्रन्थ के अलावा अन्य पुस्तकें निम्न हैं – अनुरागबाग, वैराग्य दिनेश, विश्वनाथ नवरत्न और दृष्टांत तरंगिनी। इन सब रचनाओं के आधार पर इनका रचनाकाल सं.1879 से 1912 के मध्य माना जा सकता है,

"बीर कालिंदी के तीर, नीर बीच निरख्यो मैं

नीरद नवल एक करत कलोल री

करत विहाल चित्त चोरि लेत 'दीन दयाल'

चमकै चहुँधा चारू चपला अडोल री

जागि रही चहूँ और चाँद की अमंद कला

तामें चल खंजन द्वै नाचत अमोल री

रही न निचोल सुधि जब ते वे सुने बोल

सोभा बरसाय मति कीनी अति लोल री"[156]

**44. पजनेस :**

इनका जन्म पन्ना में 1815 ई. के आस-पास माना जाता है। शिवसिंह सरोज में इनके दो ग्रंथों 'मधुरप्रिया' तथा 'नखशिख' का वर्णन हुआ है किन्तु आचार्य शुक्ल तथा नगेन्द्र के इतिहास में लिखा है कि ये उपलब्ध नहीं हैं। भारत जीवन प्रेस से 'पजनेस-प्रकाश' नामक फुटकल कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें 127 कवित्त सवैया हैं। इनकी रचनाओं में अनुप्रास का अधिक प्रयोग हुआ है तथा लगता है कि ये फ़ारसी भी अच्छे से जानते थे। इनके छंदों से यह स्पष्ट है कि इन्होंने रीति-परम्परा के अनुसार रचना की है,

"तम तम तामद रसादि पद तोयद सी

नीलक जरान पाट जटा प्रजुटी सी है

'पजनेस' कंदरप दीपति छटा सी छूटी

हाटक फटिक ओट चटक फटी सी है

कच कुच दुबिच विचित्राकृतिवत वक्र

छूटी लट पाटी घट तट लपटी सी है

विरह असुभ्र पच्छ प्रिय तो प्रदोष पाइ

पन्नगी पिनाकी पद पूजि पलटी सी है"[157]

**45. गिरिधर दास :**

गिरिधर दास का जन्म सं.1890 तथा मृत्यु सं.1917 मानी जाती है। ये हर्षचंद के पुत्र तथा भारतेंदु हरिश्चंद्र के पिता थे। इनका नाम 'सरोज' में गिरिधर बनारसी तथा बाबू गोपालचंद साह बतलाया है तथा शुक्ल जी ने गिरिधरदास, गिरिधर एवं गिरिधारन आदि नामों का वर्णन किया है। इनके पिता काशी के एक बड़े रईस थे किन्तु इनके बचपन में ही वे स्वर्ग सिधार गए। अपने परिश्रम से इन्होंने संस्कृत एवं हिंदी में बड़ी योग्यता प्राप्त की तथा 'सरस्वती भवन' नामक पुस्तकालय स्थापित किया। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने इनकी चालीस पुस्तकों का वर्णन किया है जिसमें अधिकतर संदिग्ध ही हैं। आचार्य शुक्ल के इतिहास-ग्रन्थ में इनकी चालीस पुस्तकों का नाम भी दिया गया है,

"आजु अलबेली अलबेले संग रंग धाम

रति बिपरीत पूरी प्रीती सों करति है

उझकि उझकि झुकि लचकीले लंक

अतिहि असंक अंक प्यारे को भरति है

'गिरिधरदास' उभै उरज उतंग सोहैं

उपमा कहत बानी लाजहि धरति है

मानो दुइ तुम्ब राखि छाती के तरे तरुनि

सूरत-समुन्द्र बे प्रयासहि तरति है"[158]

**46. द्विजदेव ( महाराज मानसिंह) :**

ये रीतिकालीन परम्परा के अंतिम कवि माने जाते हैं तथा इन्हें महाराजा मानसिंह के नाम से जाना जाता है जिनका उपनाम द्विजदेव था । इन्होंने ठाकुर की तरह ही प्रणय-भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति स्वाभाविक रूप में की है । इनके दो मुक्तक-संग्रह 'श्रृंगारबत्तीसी' और 'श्रृंगारलतिका' प्रकाशित हुए। शुक्ल जी ने इनके बारे में लिखा है कि, 'ब्रजभाषा के श्रृंगारी कवियों की परम्परा में इन्हें अंतिम प्रसिद्ध कवि माना जाना चाहिए।' इन्होंने इनके अलावा भी अनेक तरह के सरस और भावमयी फुटकल कवित्त लिखे हैं,

"चाले सु आई नई दुलही, लाखिबे को जबै कोऊ चाव चढ़ावति

सूही सजि सिर सारी जबै तब नाइन आपने हाथ ओढावति

भीतर भोन ते बाहर लौ, द्विजदेव जुन्हाई की धार सी धावति

सांझ समै ससि की सी कला, उदयाचल ते मनो घेरति आवति"[159]

**अन्य समप्रदाय :**

आचार्य शुक्ल के साहित्येतिहास ग्रन्थ में अधिकतम सम्प्रदायों तथा उनके साहित्य का जिक्र मिल जाता है किन्तु बिश्नोई सम्प्रदाय पर कोई आलोचना तथा विवेचन नहीं मिलता। सभी सम्प्रदायों के समानांतर बिश्नोई संप्रदाय भी राजस्थान के बागड़ क्षेत्र में फ़ैल रहा था । बिश्नोई मत का प्रवर्तक जाम्भोजी को माना जाता है। जाम्भोजी ने इस मत में धर्म की प्रतिष्ठा के लिए उन्नतीस नियम बनाये

जिससे इस सम्प्रदाय का नाम बीसनोई या बिश्नोई पड़ा। इन्होंने सम्भराथल नामक स्थल पर सं. 1542 में इस मत का प्रवर्तन किया तथा उस समय के अकाल पीड़ितों सहायता करने के साथ-साथ अपने मत का प्रचार कार्य आरम्भ किया। इनका जीवनकाल सं. 1508 से सं. 1593 तक माना गया है जिससे ये अंदाजा लगाया जा सकता है कि ये राजस्थान के संत कवियों में प्राचीन हैं। बिश्नोई मत का प्रचार तथा प्रसार राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि क्षेत्रों तक मिलता है। सम्प्रदाय में जम्भवाणी 'सवदवाणी' नाम से प्रसिद्ध है जो अत्यंत पवित्र तथा अंतिम प्रमाण मानी जाती है। इस मत में कई कवियों का वर्णन मिलता है जो निम्न हैं-

**तेजोजी चारण :**

इनका जन्म कसूम्बी नामक गाँव में हुआ। ये अनुमानत: सं. 1543 में जाम्भोजी के शिष्य बनकर बिश्नोई हुए थे। सावतसी के पुत्र राणा अजीत इनको काफी मानते थे। राणा अजीत की मृत्यु के पश्चात इन्होंने अत्यंत मार्मिक मरसिये लिखे थे-

"बेसासो मति राठवड, हुवैय घणा हराम।

पातरिया धी हेत पितु किसा सराहां काम ?"[160]

**समसदीन :**

इनका जीवनकाल सं. 1490-1550 के मध्य माना जाता है। ये नागौर के रहने वाले थे। ये जाम्भोजी से प्रभावित होकर सं.1542 में उनके भक्त बनकर बिश्नोई हुए। ये पहले मुसलमान थे जिसने बिश्नोई मत को अपनाया था। इनका सारा प्रयास आत्मोथान के लिए था-

"अगर चदण की नाव, बड़ी म्हार साम्य साक्ष्यौ।।

बोले समसदीन, खेवट पारि लथ्यौ।।"[161]

**डेल्हजी :**

ये ग्रहस्थ ब्राहमण थे जिनका जीवनकाल सं. 1410-1550 तक पाया जाता है। ये अवस्था में जाम्भोजी से बड़े बतलाए जाते हैं। इनकी दो रचनाएँ मिलती हैं- 1. बुध परगास- साखी (27 चौपाई) तथा 2. कथा अहमनी (कथा अहदावणी)- 717 दोहे।

"अप्रवाणी जल कीव न पसी। इधक न बोलि सभा मा वैसी।

चौहटे बात न कहिए पराई। सभा मा बोल बोलियै विचारी।।"[162]

इन आरंभिक साहित्यकारों के अतिरिक्त आछरे(सं. 1500-1550), पदमभक्त(सं. 1500-1555), कील्हजी चारण(सं. 1500-1560), उदोजी नैण(सं. 1505-1593) तथा अल्लूजी कविया(सं. 1520-1620) आदि कवियों के दोहे हमें इस सम्प्रदाय में मिलते हैं।

आचार्य शुक्ल ने इतिहास लेखन में जो कवि मुख्य धारा के नहीं हैं, उन्हें भले ही फुटकल खाते में रखा हो लेकिन उन कवियों को अपने साहित्येतिहास में जगह पर्याप्त दी है। अपनी आलोचना दृष्टि से उन्हें जो कवि जिस प्रवृत्ति का प्रतीत हुआ, उसे वैसी ही जगह ग्रंथ में दी। आदिकाल की बात करें तो भले ही अमीर खुसरो तथा विद्यापति जनहृदय के कवि हों लेकिन उनके लेखन की विशेषताओं के आधार पर उन्हें फुटकल खाते में रखा। अमीर खुसरो के यहाँ हमें खड़ी बोली का सबसे पहले व्यावहारिक व व्यवस्थित रूप हमें मिलता है। आचार्य शुक्ल स्वयं मानते हैं कि खुसरो अच्छे ग्रंथकार तथा नामी कवि थे। इनकी पहेलियाँ तथा मुकरियाँ काफी प्रसिद्ध थीं। इसी तरह विद्यापति को शुक्ल जी श्रृंगारी कवि मानते हैं। आचार्य शुक्ल अपनी साहित्येतिहास की परिभाषा में जिस जनता का जिक्र करते हैं, उसी जनता के समीप व प्रिय ये दोनों कवि हैं। इसके बावजूद इनको अलग खाते में रखना यह दर्शाता है कि

शुक्ल जी के साहित्येतिहास निर्माण सम्बन्धी ढ़ांचे के लिए कवि से ज्यादा उसकी प्रवृत्तियां महत्वपूर्ण हैं । कुछ आलोचकों के द्वारा विद्यापति के समय को लेकर, जो शुक्ल जी ने बतलाया है, "विद्यापति सं.1460 में तिरहुत के राजा शिवसिंह के यहाँ वर्तमान थे ।"[163] काफी अपने मतभेद दर्ज किये हैं किन्तु इस तिथि के आधार पर भी विद्यापति फुटकल खाते (भक्तिकाल) में ही रहते हैं ।

भक्तिकाल के फुटकल कवियों के अध्ययन पर यही प्रतीत होता है कि शुक्ल जी ने उन्हें पर्याप्त स्थान दिया है । गंग कवि, केशवदास, रहीम, बनारसीदास, सेनापति, लालचंद आदि का विवेचन-विश्लेषण मुख्य धारा के कवियों से भी सुंदर ढ़ंग से किया है । गंग कवि के बारे में उनका मत है कि, "वे अपने समय के नरकाव्य करने वाले कवियों में सबसे श्रेष्ठ माने जाते थे ।"[164] इनके प्रामाणिक ग्रन्थ न मिलने के कारण पुराने संग्रह ग्रन्थों से मिले कवित्त के आधार पर आचार्य शुक्ल इन्हें वीर और श्रृंगार रस के कवि मानते हैं । केशवदास के बारे में आचार्य शुक्ल लिखते हैं, "अब तक किसी कवि ने संस्कृत साहित्य शास्त्र में निरुपित काव्यांगों का पूरा परिचय नहीं कराया था । यह काम केशवदास जी ने किया ।"[165] ये केशवदास को चमत्कारी कवि कहते हैं लेकिन वहीं 'रामचंद्रिका' के बारे में इनका मत है, "केशव की रचना सबसे अधिक विकृत और अरुचिकर करने वाली वस्तु है ।"[166] 'कविप्रिया' तथा 'रसिकप्रिया' के संदर्भ में, "इन ग्रन्थों में केशव का अपना विवेचन कहीं नहीं दिखाई पड़ता । सारी सामग्री कई संस्कृत ग्रन्थों से ली हुई मिलती है ।"[167] कहा है । तमाम तरह के आरोपों के बाद भी आचार्य शुक्ल केशव को सबसे ज्यादा जगह अपने ग्रन्थ में देते हैं । रहीम का भाषा पर अधिकार वे तुलसी जैसा मानते हैं । बनारसीदास की कविता की तुलना उन्होंने सुन्दरदास की कविता से की है । सेनापति को शुक्लजी सहृदय, भावुक व निपुण कवि कहते हैं ।

रीतिकाल में भी शुक्लजी ने आलम, गुरु गोविन्दसिंह, लाल कवि, घनानंद, महाराज विश्वनाथ सिंह, गिरिधर कविराय, गुमान मिश्र, भगवंत राय खीची, बोधा, मधुसूदनदास, कवि चंद्रशेखर तथा गिरिधर

दास आदि कवियों को फुटकल खाते में रखकर इनका विवेचन-विश्लेषण किया है। रीतिकाल में तो साहित्येतिहास ग्रंथ के पृष्ठों की भी बात करें तो फुटकल कवि मुख्य कवियों से ज्यादा स्थान घेरे हुए हैं। मुख्यधारा से अलग होने पर भी ये प्रतीत नहीं होता कि इन कवियों का महत्त्व कम है या यें उपेक्षित हैं। भले ही रीतिकाल के चिंतामणि, बिहारी, मतिराम, भूषण, देव आदि प्रवृत्तिगत कवियों में से हैं लेकिन उपरोक्त फुटकल कवियों के बिना रीतिकाल को रीतिकाल कहना उपयुक्त नहीं होगा।

इस अध्याय में आचार्य शुक्ल ने अपने साहित्येतिहास ग्रन्थ में प्रत्येक कालखंड में जिन-जिन कवियों को फुटकल तथा अन्य कवि नामक खाते में रखा है उनका सामान्य परिचय दिया है। शुक्लजी के इतिहास ग्रन्थ में आदिकाल में दो कवि, भक्तिकाल में बाईस कवि तथा रीतिकाल में छयालीस कवियों को फुटकल खाते में जगह मिली है। इस अध्याय में उन सभी कवियों का परिचय शुक्लजी तथा उनके पूर्ववर्ती साहित्येतिहासकारों के मतों के अनुसार देने का प्रयास किया है। अनेक कवियों के जन्म, स्थान तथा लिंग सम्बन्धी अलग-अलग मत भी मिले हैं जिनका उल्लेख इस अध्याय में किया है। शुक्लजी के बाद के साहित्येतिहास ग्रन्थों के आधार पर इन कवियों के बारे में मिली नयी जानकारी, ग्रन्थ आदि को भी जोड़ने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त शुक्लजी के यहाँ बिश्नोई सम्प्रदाय का जिक्र नहीं मिलता, उसका जिक्र भी किया है। बिश्नोई सम्प्रदाय के आरम्भ, प्रमुख कवियों आदि का भी वर्णन किया है। इन सभी फुटकल कवियों के सामान्य परिचय के साथ-साथ इनके काव्य की विशेषता, इनकी प्रवृत्ति तथा पदों को भी इस अध्याय में दिखाने का प्रयास किया है।

**संदर्भ :**


1. शर्मा, नलिन विलोचन; साहित्य का इतिहास दर्शन; बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्; पटना; 2016; पृ.-80
2. शर्मा, जगन्नाथप्रसाद; हिंदी की गद्य-शैली का विकास; इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग; पृ.-5
3. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 48
4. तिवारी, भोलानाथ; कबीर और उनका काव्य; राजकमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-65
5. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-1
6. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य का आदिकाल; वाणी प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ. -12
7. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ. -142
8. वहीं; पृ. -142
9. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ. -125
10. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 142
11. वही; पृ. -142
12. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-672
13. वही; पृ.- 83
14. वही; पृ.-723-724
15. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-143
16. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 263
17. वही; पृ. -729
18. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 143
19. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 97
20. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-282
21. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ. -649
22. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-144
23. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 25

24. वही; पृ. -202-203

25. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-127

26. वही; पृ.-127

27. वही; पृ.-129

28. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-145

29. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 134

30. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ. -100

31. वही; पृ.- 773

32. वही; पृ. -463

33. वही; पृ.-747

34. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; पृ.-147

35. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 363-364

36. वही; पृ. -190

37. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-148

38. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ. -163

39. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-151

40. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 164

41. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-38-39

42. वही; पृ. -39-40

43. वही; पृ. -40

44. वही; पृ. -40

45. वही; पृ. -42

46. वही; पृ. -823

47. वही; पृ. -823

48. वही; पृ.-823

49. वही; पृ.-631

50. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-130

51. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-154

52. वही; पृ.-155

53. वही; पृ.-155

54. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-51

55. वही; पृ.-52

56. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-158

57. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-463

58. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-159

59. वही; पृ.-159

60. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-815

61. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-178

62. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-160

63. वही; पृ.-162

64. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-553- 554

65. वही; पृ.-740

66. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-162

67. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-329

68. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-167

69. वही; पृ.-167

70. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-592

71. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-164

72. वही; पृ.-164

73. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-186

74. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-379

75. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-192

76. वही; पृ.-192

77. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-604-605

78. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-255

79. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-227

80. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-376

81. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-227

82. वही; पृ.-227-228

83. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-385

84. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-184

85. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-229

86. वही; पृ. -230

87. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 179-180

88. वही; पृ.-180

89. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-131

90. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 230-231

91. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-470

92. वही; पृ.-793

93. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-231

94. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-520

95. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.-232

96. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.-216

97. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली;पृ.-234

98. वही; पृ.-235

99. वही; पृ.- 237

100. वही; पृ.- 238

101. वही; पृ.- 238

102. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 752

103. वही; पृ.- 382

104. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 241

105. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-288

106. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 242

107. वही; पृ.-242-243

108. वही; पृ.-243

109. वही; पृ.-244

110. वही; पृ.-244

111. वही; पृ-244

112. वही; पृ.-245

113. वही; पृ.-245

114. वही; पृ.-246

115. डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल (स.); हिंदी साहित्य का इतिहास; मयूर प्रकाशन; 2013; पृ.- 367

116. गुप्त, गणपति चंद्र; हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास; प्रथम खंड; लोकभारती प्रकाशन; 2015; पृ.- 483

117. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 247

118. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-628

119. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 217

120. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-116

121. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 249

122. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-761

123. वही; पृ.-410-411

124. वही; पृ.- 553

125. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 252

126. वही; पृ.-252

127. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 222

128. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-375

129. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 257

130. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 253

131. वही; पृ.-254

132. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 233

133. डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल (स.); हिंदी साहित्य का इतिहास; मयूर प्रकाशन; 2013; पृ.- 338

134. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-340

135. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; पृ.-256

136. वही; पृ.-256

137. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 229

138. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 257

139. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-460

140. गुप्त, किशोरी लाल (अनु); हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास; वाराणसी; 1957; पृ.- 237

141. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 438-439

142. वही; पृ.-478

143. वही; पृ.-90

144. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ. 259-260

145. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.-585

146. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; पृ.-260

147. वही; पृ.-261

148. वही; पृ.-263

149. वही; पृ.-265

150. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 673

151. वही; पृ.- 93

152. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ.- 266

153. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 483

154. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन; नयी दिल्ली; पृ. 268

155. वही; पृ.-268

156. गुप्त, किशोरी लाल (सम्पा.); शिवसिंह सरोज; इलाहाबाद; पृ.- 239-240

157. वही; पृ.-303

158. वही; पृ.-112

159. वही; पृ.- 221

160. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल; जाम्भोजी, बिष्णोई सम्प्रदाय और साहित्य (दूसरा भाग); बी.आर. पब्लिकेशन कलकत्ता; पृ.- 473

161. वही; पृ.- 484

162. वही; पृ.- 487

163. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.-51

164. वही; पृ.- 146

165. वही; पृ.- 149

166. वही; पृ.- 151

167. वही; पृ.- 149